महानदी

''नराकास'' भिलाई–दुर्ग की गृह पत्रिका

2019

छत्तीसगढ़ के हिंदी साहित्यकार

भाग–2

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
भिलाई – दुर्ग (छ.ग.)

माननीय केंद्रीय इस्पात मंत्री श्री बिरेन्द्र सिंह **चौधरी** जी
द्वारा प्रशस्ति प्रमाण पत्र ग्रहण करते हुए सचिव, नराकास भिलाई–दुर्ग

माननीय केंद्रीय इस्पात राज्य मंत्री श्री विष्णु देव साय जी के
मुख्यआतिथ्य में भिलाई इस्पात संयंत्र द्वारा अटल काव्य संध्या का भव्य आयोजन

~~~~~~~: संरक्षक :~~~~~~~

श्री अरुण कुमार रथ

मुख्य कार्यपालक अधिकारी

भिलाई इस्पात संयंत्र एवं

अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

भिलाई–दुर्ग (छ.ग.)

~~~~~~~: मार्गदर्शक :~~~~~~~

श्री के.के. सिंह

कार्यपालक निदेशक (कार्मिक व प्रशासन)

भिलाई इस्पात संयंत्र

~~~~~~~: संपादक :~~~~~~~

डॉ. बी.एम. तिवारी

सहा. महाप्रबंधक (राजभाषा) एवं सचिव,

नगर राजभाषा कार्या. समिति, भिलाई – दुर्ग (छ.ग.)

~~~~~~~: संपादक मंडल :~~~~~~~

श्री एस.के. राजा

उप महाप्रबंधक

सेल सेट, भिलाई

श्री पंचराम साहू

वरीय सांख्यिकीय अधिकारी

एन.एस.एस.ओ. दुर्ग

श्री गोपेन्द्र सिंह ठाकुर

सहायक

केनरा बैंक, सेक्टर–6, भिलाई

श्रीमती भावना चाँदवानी

उप प्रबंधक

युनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कं.लि. भिलाई

मुख्यपृष्ठ अभिकल्पन

वीरु स्वर्णकार

डिजाईनर स्क्वेयर

सेक्टर – 8, भिलाई(छ.ग.)

मो. : 77228 28880, 96911 89891

संपादन सहयोग

नराकास सचिवालय के अधिकारी एवं कार्मिक

महानदी

राजभाषा गृह पत्रिका–वर्ष 2019

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भिलाई – दुर्ग (छ.ग.)

छत्तीसगढ़ हिंदी साहित्यकार भाग–2, अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृष्ठ क्रं.
	छत्तीसगढ़ी बोली :	
01.	उद्भव एवं विकास	06
02.	प्रचलित छत्तीसगढ़ी मुहावरें	09
	छत्तीसगढ़ का साहित्य :	
03.	लोक साहित्य	10
04.	लोक कथाएँ	15
	छत्तीसगढ़ की कला :	
05.	गौरवशाली कला परम्परा	20
06.	गड़वा कला	28
07.	तुम्बा शिल्प	31
08.	लोक गीत	32
	छत्तीसगढ़ के साहित्यकार :	
09.	बसंत तिवारी, अशोक सिंघई	35
10.	दादूलाल जोशी फरहद, परितोष चक्रवर्ती	36
11.	शकुन्तला शर्मा, डॉ. सुरेन्द्र दुबे	37
12.	डॉ. मृणालिका ओझा, कुबेर सिंह साहू	38
13.	जगदीश देशमुख, मंगत रविन्द्र	39
14.	डॉ. पी.सी. लाल यादव, विनोद साव	40
15.	डॉ. अजय पाठक, डॉ. सविता मिश्रा	41
16.	डॉ. उर्मिला शुक्ला, डॉ. सुभद्रा राठौर	42
17.	जय प्रकाश मानव, राजाराम रसिक	43
18.	शैल चंद्रा, डॉ. एकांत श्रीवास्तव	44

टिप्पणी :~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

पत्रिका की रचनाओं में व्यक्त विचारों से संपादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। मौलिकता एवं अन्य विवादों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

संपर्क सूत्र : ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

राजभाषा विभाग–313–ए, तीसरा तल, इस्पात भवन,

भिलाई इस्पात संयंत्र, भिलाई नगर (छ.ग.) – 490 001

हरीश सिंह चौहान
सहायक निर्देशक (कार्यान्वयन)
एवं कार्यालयाध्यक्ष
HARISH SINGH CHAUHAN
ASSTT.DIRECTOR (IMPLEMENTATION)

भारत सरकार

भारत सरकार
गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग,
क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (मध्य.)
निर्माण सदन 52ए, अरेरा हिल्स,
कमरा नं. 206, भोपाल - 462011
भोपाल (म.प्र.)
फोन : 0755–2553149

संदेश

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति भिलाई दुर्ग पत्रिका "महानदी" प्रकाशित करने जा रही है। इस पत्रिका की गौरवशाली विकास यात्रा सतत रूप से जारी है। पत्रिका एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो समय के अनुभवों को न केवल अपने शब्दों में बयां करता है बल्कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों को एकजूट रखने में इस पत्रिका की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका भी है।

हमें अपना कार्यालयीन कामकाज राजभाषा हिंदी में करने को संवैधानिक बाध्यता मानकर नहीं करनी चाहिए बल्कि हिन्दी को अपने दिल से अपनाना चाहिए। यह भी एक सच्चाई है कि हिंदी भाषी होने के नाते हम अपनी भावनाएं अपने विचारों को जितने अच्छे से हिंदी में अभिव्यक्त कर सकते है उतने प्रभावी ढंग से हम अंग्रेजी में अभिव्यक्त नहीं कर सकते, तो क्यों न अपना कार्यालयीन कामकाज हिंदी में करें और हिंदी के कामकाज के प्रतिशत को बढ़ाने में अपना योगदान दे। किसी भी देश की राजभाषा नरकार और जनता के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी होती है इसलिए प्रत्येक सरकारी कर्मचारी का दायित्व है कि वह अपना शासकीय कार्य राजभाषा हिंदी में करें। भारत की अधिकांश जनता हिंदी समझती है और इसका प्रयोग करती है।

प्रसन्नता की बात है कि भिलाई दुर्ग नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य कार्यालयों में कार्यरत् अधिकारी/कर्मचारी अपने अपने क्षेत्रों में अनुकरणीय योगदान देने के साथ–साथ देश की राजभाषा हिंदी में भी उत्कृष्ट लेख और रचनाएं लिख रहे है। मैं ऐसे सभी लेखकों और रचनाकारों को बधाई देता हूं और आशा करता हूं कि उनके विचारों से पाठकगण भी निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे। यह पत्रिका एक नया कीर्तिमान स्थापित करने की दिशा में आगे बढ़ेगी। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति भिलाई दुर्ग के सभी सदस्य कार्यालय टीम भावना के रूप में कार्य कर रहे हैं। इसी सहयोग के कारण आपकी समिति को वर्ष 2017–18 की अवधि के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की श्रेणी में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया है। इस गौरव के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष एवं सदस्य सचिव सहित सदस्य कार्यालयों के सभी कार्यालय प्रमुखों एवं राजभाषा कार्य से जुड़े कार्मिकों को मैं अपनी ओर से बधाई देता हूं।

मैं इस पत्रिका के निरंतर सफल प्रकाशन की कामना करते हुए अपनी हार्दिक शुभकामनाऐं देता हूं।

प्रतिष्ठायाम,
मुख्यकार्यकारी अधिकारी
भिलाई इस्पात संयंत्र एवं अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भिलाई दुर्ग
प्रशासनिक भवन, तृतीय तल, भिलाई 490 001 (छत्तीसगढ़)

(हरीश सिंह चौहान)

हर किसी की जिन्दगी से जुड़ा हुआ है सेल
There's little bit of SAIL in everybody's life

अरूण कुमार रथ
मुख्य कार्यपालक अधिकारी, भिलाई इस्पात संयंत्र
एवं अध्यक्ष, नराकास, भिलाई-दुर्ग(छ.ग.)
Arun Kumar Rath
CEO, Bhilai Steel Plant & Chairman TOLIC, Bhilai-Durg(CG)

स्टील अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड
STEEL AUTHORITY OF INDIA LIMITED
भिलाई इस्पात संयंत्र
BHILAI STEEL PLANT

संदेश

मुझे यह जानकार प्रसन्नता हो रही है कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भिलाई–दुर्ग के सदस्य संस्थानों में कार्यरत कार्मिकों द्वारा छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति एवं हिंदी साहित्यकारों की जीवनी पर आधारित ''महानदी'' का यह विशेषांक प्रकाशित हो रहा है। इससे यह सिद्ध हो रहा है कि समिति के संस्थानों में कार्यरत प्रतिभा संपन्न कार्मिक न केवल कार्यालयीन काम हिंदी में करते हैं अपितु साहित्य सेवा भी कर रहे हैं, तभी तो हमारे नराकास को लगातार मध्य क्षेत्र के सर्वश्रेष्ठ नराकास का पुरस्कार प्राप्त हो रहा है। सच मानिये तो यह पुरस्कार हमारे सामूहिक प्रयास का ही प्रतिफल है। ऐसे भगीरथ प्रयास करने वाली कर्मठ एवं सृजनशील बिरादरी को हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ।

आज सूचना प्रौद्योगिकी विभाग भी इस बात को स्वीकारता है की देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है। तभी तो यूनिकोड जैसी पद्धति के माध्यम से हमने हिंदी प्रयोग वृद्धि की दिशा में चमत्कारिक प्रगति की है। अतः मेरा यह मानना है कि यूनिकोड में काम करना अति सरल है, इसे हमसबको अपनाना चाहिए।

अंत में ''महानदी'' के इस आँचलिक विशेषाँक के प्रकाशन से जुड़े सभी रचनाकारों / संपादकमंडल के सदस्यों को शुभकामनाएँ देते हुए, इसके सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

अरूण कुमार रथ

(अरूण कुमार रथ)

हर किसी की जिन्दगी से जुड़ा हुआ है सेल
There's little bit of SAIL in everybody's life

के.के. सिंह
कार्यपालक निदेशक (कार्मिक एवं प्रशासन)
K.K. Singh
ED (P&A)

स्टील अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड
STEEL AUTHORITY OF INDIA LIMITED
भिलाई इस्पात संयंत्र
BHILAI STEEL PLANT

संदेश

मानवीय संवेदनाओं के संप्रेषण का सशक्त माध्यम है भाषा और भाषा वही सक्षम है, जो जुबान पर आसानी से आती है। इस दृष्टि से देखा जाए तो हिंदी, समझने में भी आसान तथा समझाने में भी आसान है। यही कारण है कि हिंदी आज विश्व में बोली जाने वाली प्रथम भाषा बन गई है।

हिंदी की इसी विशालता एवं वैज्ञानिकता ने इसे भारतीय संविधान में राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। उसी संविधानसम्मत राजभाषा के प्रचार–प्रसार में नराकास, भिलाई–दुर्ग सतत प्रयासरत है। इसी कड़ी में समिति की हिंदी गृह पत्रिका ''महानदी'' का यह अंक '' छत्तीसगढ़ के हिंदी साहित्यकार'' विशेषाँक के रूप में प्रकाशित हो रहा है, ताकि आप इस प्रदेश के साहित्य, संस्कृति एवं लोककला से रूबरू हो सकें।

आशा है, पत्रिका में प्रकाशित रचनाए आपके लिए उपयोगी एवं ज्ञानवर्द्धक सिद्ध होगी।

पत्रिका प्रकाशन की अमित शुभकामनाओं सहित,

के.के. सिंह

(के.के. सिंह)

डॉ. बी.एम. तिवारी
सहा. महाप्रबंधक (राजभाषा) एवं सचिव,
नराकास, भिलाई-दुर्ग(छ.ग.)

स्टील अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड
STEEL AUTHORITY OF INDIA LIMITED
भिलाई इस्पात संयंत्र
BHILAI STEEL PLANT

संपादकीय

छत्तीसगढ़ ऐतिहासिक दृष्टि से एक समृद्ध प्रदेश के रूप में अपनी अहमियत रखता है, जिसका वर्णन रामायण एवं महाभारत जैसे उपजीव्य महाकाव्यों में प्रमुखता से मिलता है। ऐसे प्राकृतिक ,साहित्यिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि से परिपूर्ण क्षेत्र एवं रहवासियों को भला कैसे भुलाया जा सकता है।

यह एक ओर जहां प्राकृतिक सुषमा का भंडारगार हैं तो वहीं दूसरी ओर साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सभ्यताओं का युगल संगम भी हैं ।

प्रदेश की इसी भाव को आत्मसात करते हुए नराकास बिरादरी ने छत्तीसगढ़ के साहित्यकारों को सामाजिक पटल पर लाने का भगीरथ प्रयास किया है। यह कार्य बड़ा ही चुनौतीपूर्ण रहा है। इसे पूरा करने में छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादमी तथा कला परंपरा संस्थान एवं अन्य उपयोगी साहित्यकारों का अविस्मरणीय योगदान है।

इस अभियान में साहित्यकारों की दीर्घ परम्परा को देखते हुए यह दूसरा अंक है, जिसमें लोक कला संस्कृति एवं साहित्य को एक साथ त्रिवेणी के रूप में उपस्थापित किया गया है।

एतदर्थ 'महानदी' का यह साहित्यकार विशेषांक, भाग 2 आपके समक्ष सादर प्रस्तुत है। इस अंक में छत्तीसगढ़ के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रादुर्भूत हिंदी साहित्यकारों को लिया गया है। इस प्रयास में अगर भूलवश कहीं कुछ त्रुटि हो तो उसे बाल सुलभ अज्ञानता समझ कर क्षमा करेंगे।

सादर,

त्वदियंवस्तु गोविन्द, तुभ्यमेव समर्पयेत।

(डॉ. बी.एम. तिवारी)

हर किसी की जिन्दगी से जुड़ा हुआ है सेल
There's little bit of SAIL in everybody's life

छत्तीसगढ़ी बोली का उद्‌भव एवं विकास

भाषा का इतिहास :

भाषा विकास के अंतर्गत कतिपय स्थानीय बोलिया मृतप्राय अवस्था में भी संचरणशील रहती हैं। कालान्तर में गठित होने वाली राष्ट्रीय, पूर्णतया कुशल, परिनिष्ठित अथवा आदर्श भाषा के स्वरूप विन्यास में उनका सहयोग प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष होता है। छत्तीसगढ़ी उन्हीं स्थानीय बोलियों में से एक है। 10वीं शताब्दी के लगभग जब उत्तर–भारत की सभ्यता बलात् दक्षिण की ओर संप्रेषित हो रही थी, संभवतः तभी उत्तर–भारत से आवास की खोज में अथवा समृद्धि की आकांक्षा के निमित्त कुलीन जातियों ने इस अंचल में प्रवेश किया। ये जातिया अपने साथ–साथ उत्तर–भारत की संस्कृति ही लेकर नहीं आयीं, अपितु उत्तर–भारत की बोलिया भी उनके साथ यहा आयीं। उनके सम्पर्क से जिस पृथक् बोली का विकास हुआ, उसे छत्तीसगढ़ी बोली के नाम से जाना जाता है।

प्राचीनकाल में कोई प्रदेश राजनीतिक रूप से भाषा के आधार पर चिन्हित नहीं रहा। प्रदेशों को इस रूप में संगठित करने की प्रक्रिया भारत के स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद अपनाई गयी है। यूरोपियन राजतंत्र पद्धति में सिंचित जातीय राष्ट्रवादी प्रजातंत्र के प्रभाव से भारत में भी भाषायी आधार पर प्रदेशों का संगठन हुआ है। प्रारंभिक काल से भारत का कोई भी राज्य प्रशासनिक इकाई के अतिरिक्त किसी दूसरी तरह की इकाई में गठित नहीं था। संस्कृत भारत के सभी राज्यों की राजभाषा थी। छत्तीसगढ़ी के साथ एक विडम्बना यह भी है कि इस अंचल के सभी पुराने साहित्यकारों ने ब्रज अथवा अवधी में अपनी साहित्यिक रचनाएं प्रस्तुत कीं, जिसके कारण भी छत्तीसगढ़ी के क्रमिक विकास के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

छत्तीसगढ़ी बोली का उद्‌भव

अधिकांश विद्वान एकमतेन् यह स्वीकार करते हैं कि छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति अर्द्धमागधी, प्राकृत तथा अपभ्रंश से हुई। अवधी और बघेली की उत्पत्ति भी इनसे हुई है। अतः छत्तीसगढ़ी को भी इनसे उत्पन्न मानना एक सीमा तक समीचीन है। छत्तीसगढ़ी संज्ञा और सर्वनाम के विषय में मागधी भाषाओं तथा बोलियों से साम्य रखती है, किन्तु, कियापदों के सम्बन्ध में यह मध्यम–मार्ग का अनुसरण करती है। यह शौरसेनी और मागधी दोनों के रूपों को अपनाती है और इस प्रकार अर्द्धमागधी का यथार्थ प्रतिनिधित्व करती है, किन्तु इस सन्दर्भ में प्रायः कौसली का भी उल्लेख किया जाता है। 'कौसली' कौन–सी भाषा थी, यह अब तक स्पष्ट नहीं हो पाया है। डॉ.भोलानाथ तिवारी पूर्वी हिन्दी के पूर्व रूप अपभ्रंश और अवहट्‌ट को कौसली स्वीकार करते हैं। इसी कौसली से अवधी की उत्पत्ति हुई। इस अधिवृत्ति को मान्यता प्रदान करने पर छत्तीसगढ़ी की भी जननी 'कौसली' सिद्ध होती है, किन्तु उसका पूर्व रूप अवधी ही रहा होगा। कारण यह है कि अवधी और छत्तीसगढ़ी में पर्याप्त साम्य है। श्री काशी प्रसाद मिश्र ने उल्लेख किया है कि 'अवधी, और छत्तीसगढ़ी ' का इतना अधिक मेल है कि एक बोली बोलने वाला मनुष्य दूसरी बोली को बड़ी सरलता से समझ लेता है।

छत्तीसगढ़ी अवधी से ही उत्पन्न हुई होगी, इसके प्रमाण स्वरूप बस्तर राज्य के दंतेवाड़ा में विक्रम संवत् 1760 के शिलालेख की भाषा को प्रस्तुत किया जा सकता है, जिसमें छत्तीसगढ़ी के सर्वाधिक प्राचीन रूप का आभास होता है। पं.लोचनप्रसाद पाण्डेय द्वारा प्रस्तुत शिलालेख की अविकल प्रतिलिपि इस प्रकार है–

''दंतावला देवि जयति।। देववाणी–मह प्रशस्ति लिपाए गपर है महाराजा दिक्‌पाल देव के कलियुग – मह संस्कृत के बचवै आ थो रहौ है ते पांई दूसर पाथर –मह भाषा लिषें है।।

पुनि सकलपुर वासी लोग समेत दंतावला के कुटुम–जात्रा करे संवत् सत्रह सै साठि 1760 चैत्र सुदि 14 आरम्भ वैशाष णदि इसे सम्पूर्ण में जात्रा के तैको हजार मेसा बोकरा मारे तैंकर रकत प्रवाह वट पाच दिन सांषिनी नदी लाल कुसुम बने भए।। ई अथे मैथिल भगवान भिक्ष राजगुरू पंडित भाषा और संस्कृत दोउ पाथर मह लिषाए।। अस राजा श्री दिक्‌पाल देव देव समान कलियुग न हो है आन राजा।

प्रस्तुत शिलालेख की भाषा छत्तीसगढ़ी की अपेक्षा अवधी के अधिक निकट है। बोकरा, तेकर जैसे दो तीन शब्द ही वर्तमान छत्तीसगढ़ी में प्रयुक्त शब्दों से ध्वनि एवं अर्थसाम्य रखते हैं। अतः यह सिद्ध है कि 17 वीं शताब्दी के अन्त तक छत्तीसगढ़ी का पृथक्

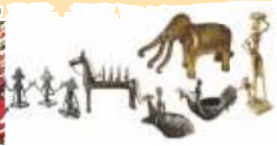

अस्तित्व गठित नहीं हो पाया था।

छत्तीसगढ़ी के विकास क्रम को तीन खण्डों में विभाजित किया जा सकता है –

छत्तीसगढ़ी बोली का विकास :

(1) छत्तीसगढ़ी 10वीं शताब्दी के आस–पास अवधी से पृथक हुई, किन्तु उसके स्वतंत्र स्वरूप गठन की प्रक्रिया 17वीं 18वीं शताब्दी में ही आरम्भ हुई।

(2) 19वीं शताब्दी तक छत्तीसगढ़ी का स्वतंत्र विकास हो चुका था। इस कालावधि तथा इसे पूर्व के काल में छत्तीसगढ़ी में साहित्य सृजन के उल्लेख तो किये जाते हैं, किन्तु उसकी प्रामाणिकता संदिग्ध है। इस सम्बन्ध में अनेकशः भ्रान्तियाँ उत्पन्न की जाती हैं। कतिपय भ्रान्तियों का निराकरण आगे चलकर किया जायेगा।

(3) 20वीं शताब्दी के उन्मेष के साथ ही छत्तीसगढ़ी का साहित्य उजागर होने लगा। यद्यपि छत्तीसगढ़ी का साहित्य अभी परिपक्व नहीं है, तथापि उसके विकास को सन्तोषजनक माना जा सकता है।

ग्रियर्सन को भारतीय भाषाओं का सर्वोत्कृष्ट विश्लेषक मान लिया गया है, अतः छत्तीसगढ़ी की बोलियों के वर्गीकरण का उनका प्रयास भी विवादास्पद या मतभेदपरक नहीं रहा है। उन्होंने क्षेत्रीय आधार पर छत्तीसगढ़ी, लरिया या खल्टाही और सरगुजिया, तथा जातीय आधारों पर सदरी, कोरबा, बैगानी, बिंझवारी, कलंगा और भूलिया को छत्तीसगढ़ी की बोलियों के रूप में महत्ता दी है। इस वर्गीकरण का इतिहास की दृष्टि से पर्याप्त महत्व है, तथापि इसमें कुछ कमियाँ देखी जा सकती हैं। उन्होंने छत्तीसगढ़ी, लरिया और खल्टाही को समानार्थक माना है, पर वस्तुतः उन्हें समानार्थक या पर्यायवाची मानना उचित नहीं है, क्योंकि ये तीनों शब्द छत्तीसगढ़ी के बोलीगत विभेद हैं, जो छत्तीसगढ़ी के परिष्ठित स्वरूप का परिचय देते हैं। छत्तीसगढ़ी के यह रूप, रायपुर, बिलासपुर एवं दुर्ग जिलों में प्रचलित है। कालक्रमानुसार परिनिष्ठता में संक्रमणीय लोच होता है, अतः वह राजनीतिक तथा अन्य परस्पर के व्यावहारिक कारणों के सापेक्ष होती है। प्रारम्भ में श्रीपुर या सिरपुर छत्तीसगढ़ की राजधानी थी, इसलिए छत्तीसगढ़ी का परिनिष्ठत स्वरूप रायपुर की जनभाषा थी। कालान्तर में रतनपुर छत्तीसगढ़ की प्रतिष्ठा का केन्द्र बना, इसलिए रतनपुर की बोली अर्थात् बिलासपुरी परिनिष्ठित बनी। आधुनिक युग में, बिलासपुर की अपेक्षा रायपुर की प्रमुखता के कारण रायपुरी ही परिनिष्ठित हो चली है। आकाशवाणी ने भी छत्तीसगढ़ी का यही रूप अपनाया है। पश्चिमी छत्तीसगढ़ की सीमाए जहाँ उड़ीसा से मिलती हैं वहाँ लरिया बोली जाती है। 'खल्टाही' छत्तीसगढ़ की पूर्वी सीमाओं की बोली है, जो विदर्भ तथा मंडला जिले की सीमा से लगी हुई है। इस पर बुंदेलखण्डी का प्रभाव पड़ा है। छत्तीसगढ़ के जातिगत विभेदों के आधार पर बोलियों के उच्चरित रूप प्रायः नहीं बदलते।

ग्रियर्सन ने लिखा है –" जिस समय मैं पूर्वी हिन्दी पर काम कर रहा था, उसी समय, प्रो.स्टेन कोनो मराठी पर कार्य कर रहे थे। स्वतंत्र ढंग से काम करते हुए हम दोनों ऐसे क्षेत्र में पहुचे, जहाँ एक विचित्र मिश्रित बोली 'हल्बी' प्रचलित है। पूर्वी हिन्दी के दृष्टिकोण से विचार करते हुए मैंने उसे मराठी का ही रूप माना, परन्तु उसके प्रतिकूल मराठी का चश्मा लगाकर डॉ.स्टेन कोनो ने इसे पूर्वी हिन्दी के रूप में स्वीकार किया। पहले हल्बी को भी छत्तीसगढ़ी की ही एक बोली माना जाता था।" इस सम्बन्ध में छत्तीसगढ़ की रियासतों के पोलिटिकल एजेंट ई.ए.ब्रेट ने बस्तर की भाषा के सम्बन्ध में लिखा है–"बस्तर की रियासतों में प्रमुखतया हिन्दी, हल्बी, तेलगु और गोंड़ी की विभिन्न बोलियाँ प्रचलित हैं। हलबी छत्तीसगढी का ही एक विश्रृंखल रूप है।" पर ग्रियर्सन ने इसे मराठी के साथ युक्त करते हुए कहा है–" हल्बी के नमूनों का परीक्षण बतलाता है कि वस्तुतः छत्तीसगढ़ी,उड़िया तथा मराठी का एक मिश्रित रूप है और अधिक औचित्य के साथ यह अन्तिम निर्दिष्ट भाषा के साथ अध्ययन की जा सकती है।" यहाँ अध्ययन के औचित्य की बात कही गयी है, तथापि हलबी का अध्ययन छत्तीसगढ़ी के साथ भी अनुचित नहीं है। वस्तुतः बोलीगत विभेद मुख्यतः जातिगत एवं भौगोलिक सीमाओं के आधार पर विवेचित किये जा सकते हैं, अतः हम इन्हीं आधारों पर छत्तीसगढ़ी की निम्न बोलियों को स्वीकार कर सकते हैं––

(1)छत्तीसगढ़ी––(अ)रायपुरी,(ब)बिलासपुरी (2)खल्टाही (3) लरिया (4) सरगुजिया (5) सदरी कोरबा (6)बैगानी (7)बिंझवारी (8) कलंगा (9) झूलिया (10) बस्तरी या हलबी

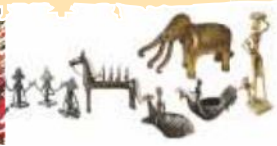

उपर्युक्त वर्गीकरण में सन् 1961 ई. की जनगणना पर आधारित समस्त विभेदों का समाहार हो जाता है। छत्तीसगढ़ी के रायपुरी और बिलासपुरी रूपों के पार्थक्य का मूलाधार शिवनाथ नदी है, जो इन दोनों जिलों की सीमा–रेखा का निर्माण करती है, किन्तु यह पार्थक्य इतना नहीं है कि इन्हें स्वतंत्र बोलियाँ बना दें। इसी प्रकार सरगुजिया और सदरी कोरवा के वाणी–विभाजन का आधार भी पर्वतमालाएँ ही हैं। बैगानी, बिंझवारी, कलंगा और भूलिया के वर्गीकरण का आधार मुख्यतया जातिगत है, तथापि कतिपय भौगोलिक स्थितियाँ भी इनके पार्थक्य का कारण हैं। खल्टाही का वर्गीकरण विशुद्ध प्राकृतिक आधार पर किया गया है तथा बस्तरी या हलबी के वर्गीकरण का भी यही हेतु है। छत्तीसगढ़ी की सामान्य प्रवृत्तियाँ इन सभी में विद्यमान हैं। रायपुरी और बिलासपुर में किंचित पृथकता होते हुए भी इनके मध्य एकीकरण की प्रवृत्ति विद्यमान है तथा इनका मध्यवर्ती अंतराल केवल सीमावर्तिनी बोलियों के प्रभाव से निर्मित हुआ है।

छत्तीसगढ़ी की बोलियों के उपर्युक्त वर्गीकरण में सन् 1961 ई.की जनगणना में उल्लिखित छत्तीसगढ़ी की समस्त मातृभाषाओं का समाहार हो जाता है। इसमें छत्तीसगढ़ी, बैगानी, भूलिया, बिंझवारी, लरिया और सरगुजिया मातृभाषाएँ बोलियों के रूप में स्वीकृत हैं तथा बिलासपुर मातृभाषा का अन्तर्भाव छत्तीसगढ़ी के अन्तर्गत किया गया है। कांकेरी मातृभाषा का समाहार बस्तरी या हलबी के अन्तर्गत हो जाता है। देवार, धमदी, गौरिया, गोरी, नागवंशी, पंडो, पनकी और सतनामी मातृभाषाएँ जातिवाची हैं। इनमें से प्रथम चार यायावर जातियाँ हैं और अन्तिम चार पूरे छत्तीसगढ़ में यत्र–तत्र बिखरी हुई हैं। ये जातियाँ उन्हीं बोलियों को बोलती हैं जो उनके क्षेत्र में प्रचलित हैं। इन जातियों में सतनामियों की मातृभाषा अपनी विशिष्ट सुरात्मक एवं कलात्मक पद्धति से बोली के स्तर के करीब पहुँच रही हैं।

छत्तीसगढ़ी के उद्भव–विकास, व्याकरणगत सामान्य विशेषताओं उप–शाखाओं और कहावतों तथा मुहावरों में अभिव्यंजना–सौन्दर्य पर दृष्टिपात करते हुए हम देखते हैं कि हिन्दी को समृद्ध करने में छत्तीसगढ़ी एक सीमा तक पर्याप्त सहयोगिनी सिद्ध हो सकती है। छत्तीसगढ़ी की पाचन शक्ति इतनी अधिक प्रखर तथा उसकी व्यंजना में इतना लोच है कि यह प्रत्येक भाषा के शब्दों को सहज ही आत्मसात् कर लेती है। उसमें संस्कृत के उद्भव–तत्सव रूपों, ब्रज–अवधी, उर्दू–फारसी, अंग्रेजी, मराठी, उड़िया तथा आदिवासी बोलियों, सभी के शब्द मिलेंगे, जो भाषा–विज्ञान के अध्ययन की दिशा में अनेकशः नव क्षितियों का निर्माण कर सकता है। जायसीकृत 'पद्मावत्' तथा तुलसीकृत 'मानस' में प्रयुक्त शब्द छत्तीसगढ़ी के महत्व का परिचायक है। डॉ.कान्तिकुमार जैन ने अपने ग्रन्थ 'छत्तीसगढ़ी बोली, व्याकरण और कोश' में इनकी विशद व्याख्या की है। श्री हेमनाथ यदु (रायपुर) ने भी विभिन्न जातियों द्वारा प्रयोग में लाने वाले ऐसे सहस्त्रों शब्दों का संकलन किया है, जो अनुसन्धान हेतु महत्वपूर्ण सोपानों का उद्घाटन करते हैं। हमने तो डिंगल काव्य 'बीसलदेव रासो' तक में प्रयुक्त और छत्तीसगढ़ी के शब्दों में पर्याप्त ध्वन्यताम्कता और अर्थात्मक साम्य पाया है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य है––

(अ) पलिंग हुती घण भुई पड़ी ।
भुई–भुयां = जमीन।

(ब) राजा भाज की चउरी एह चड्या जाई।
चउरी–चौरा = चबूतरा या द्वार का हिस्सा।

(स) तठइ राइ बोला इसी भीतरि गोठि ।
गोठि–गोठ = बातचीत ।

(द) काढ़उ न पीवए न षध षाई।
षध – औखध–दवा ।

इस प्रकार छत्तीसगढ़ी का प्रच्छन्न इतिहास अनुसन्धान की दृष्टि से कितने ही रहस्यमय संकेत देता है। यहाँ यह विवेचना इसलिए अनिवार्य हो गई है कि छत्तीसगढ़ में जब साहित्यिक चेतना का विकास हुआ, तब साहित्य के अन्तर्गत लौकिक आचार–विचारों के प्रभाव के साथ ही छत्तीसगढ़ी के एक विशेष रूप सम्बन्धी आयाम का भी उद्घाटन हुआ। भाषा प्रयोग की दृष्टि से छत्तीसगढ़ में विशुद्ध ब्रज एवं अवधी का प्रयोग करने वाले साहित्यकार अल्प ही रहे हैं। अधिकांश कवियों के काव्य में भाषा का मिश्रित प्रयोग लक्षित होगा, जिसे छत्तीसगढ़ी का प्रभाव स्वीकार किया जा सकता है। भारतेन्दु–युग के पूर्व तक की भाषा में विशुद्धता है, किन्तु बाद के ब्रज अथवा अवधी भाषा का प्रयोग करने वाले कवियों की काव्य–व्यंजना में, संकरता है। हम कह सकते हैं कि छत्तीसगढ़ में "साहित्यिक चेतना के विकास और उसके विविध आयामों" के प्रारूप में छत्तीसगढ़ी बोली की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

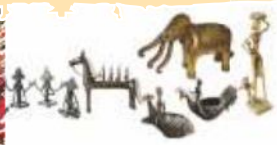

प्रचलित छत्तीसगढ़ी मुहावरें

मुहावरा मूल रूप से अरबी भाषा का शब्द है, जो हिंदी तथा हिंदी के सभी जनपदों की भाषाओं में अपना लिया गया है। अरबी में इस शब्द का अर्थ आपस में बातचीत एवं जवाब–सवाल करने वाला वाक्यांश है। छत्तीसगढ़ की भौगोलिक स्थिति भारत के हृदय स्थल के समान है। यह बघेली, बुन्देली, कोशली, नगपुरी, सरगुजिया, लरिया, हल्बा, भतरी, मराठी, उड़िया, तेलुगु आदि भाषाई क्षेत्रों से घिरा हुआ है।

देश के हृदय स्थल में स्थित होने के कारण अत्यन्त प्राचीन काल से ही देश के विभिन्न क्षेत्रों से लोग यहाँ आकर बसते रहे हैं। यहाँ बिहारी, उड़िया, मराठी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयाली, बंगाली, गुजरती, राजस्थानी, हरियाणी, उत्तरप्रदेश, प्रदेशी की काफी बड़ी आबादी है। इन सभी अंचलों के लोगों की भाषा और संस्कृति पर पड़ा है। इन सभी कारणों से छत्तीसगढ़ी भाषा और संस्कृति समृद्ध हुई है। यहाँ हम कुछ ऐसे छत्तीसगढ़ी बोली में प्रचलित मुहावरे बता रहे है, जिनसे मिलता–जुलता मुहावरा हिंदी में भी प्रचलित है –

- अंधियार म बरछी फेंकना – अंधेरे में तीर चलाना
- अंगरी म नचाना – उंगली पर नचाना
- आंखी फेरना – आँख फेरना
- आंखी के काजर – आँख का तारा
- आंखी में धुर्रा – धूल झोंकना
- आगू–पीछू घूमना – चापलूसी करना
- कठुआ के बइला – काठ का उल्लू
- खून के पानी करना – खून–पसीना एक करना
- गोड़ ऊपर मूड़करी – काम बिगाड़ना
- चीरई चाँ न कउआ काँ – सन्नाटा पसरना
- छाती छोलना – छाती में मूंग दलना
- डरा डंडा उसालना – बोरिया बिस्तर बांधना
- देरी हाथ के खेल – बांये हाथ का खेल
- तिड़ी–बिड़ी होना – तितर–बितर होना ।
- तिल ले ताड़ बाना– तिल का ताड़ बनाना ।
- दया मया धरना – प्रेम प्रीति बनाये रखना।
- दूध के मांछी – दूध की मक्खी।
- नोन मिरिच लगाना– नमक मिर्च लगाना ।
- भेड़िया धसान – अंधा अनुकरण।
- माटी के मोल – मिट्टी के मोल ।
- बखत–बखत के बात – समय–समय की बात।
- सोन असन तउलना – एक दम सही तौलना।
- सांप ला दूध पिलाना – दुश्मन को बढ़ावा देना।
- कठुआ के बइला – काठ का बैल ।
- अंधियार म बरछी फेंकना – अंधेरे में बरछी फेंकना।
- अंगना के गोठ खोल न जाना – घर की बात सार्वजनिक होना
- बादर ले गिरके रूख म अरझना – आसमान से गिरा खजूर में अटका।
- हंसिया असन सोझ होना (व्यंग्य में) – जलेबी की तरह सीधा ।

छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य

छत्तीसगढ़ी भाषा अर्धमागधी की दुहिता एवं अवधी की सहोदरा है। छत्तीसगढ़ी और अवधी दोनों का जन्म अर्धमागधी के गर्भ से आज लगभग 1080 वर्ष पूर्व नवीं–दसवीं शताब्दी में हुआ था। इस एक सहस्र वर्ष के सुदीर्घ अंतराल में छत्तीसगढ़ी और अवधि पर अन्य भाषाओं के प्रभाव भी पड़े तथा उनका स्वरूप पर्याप्त परिवर्तित हो गया। छत्तीसगढ़ी भाषा–भाषियों की संख्या अवधि की अपेक्षा कहीं अधिक है, और इस दृष्टि से यह बोली के स्तर से ऊपर उठकर **भाषा** का स्वरूप प्राप्त करती है।

भाषा और साहित्य परस्पर अंतरावलम्बी होते हैं। इस दृष्टि से किसी भी भाषा के साहित्य के विकास की रेखाएँ अतीत में सुस्पष्ट नहीं है। इसका कारण यह नहीं है कि छत्तीसगढ़ साहित्य–सृजन कि दृष्टि से अनुर्वर रहा है, प्रत्युत यह तो महान साहित्य–सृष्टाओं और कर्मियों कि भूमि रही है। यह बहुत संभव है कि संस्कृत भाषा की लोकोत्तर प्रतिष्ठा के कारण यहाँ के लेखकों ने संस्कृत में ही अपनी अभिव्यक्ति की तथा आंचलिक भाषा के प्रति उदासीन रहे। जब सोलहवें संवत् में काव्य–रचना करने वाले "कठिन काव्य के प्रेत" केशवदास को भी लोकभाषा में कविता करने के कारण ग्लानी का अनुभव करना पड़ा, तब यहाँ के साहित्यकारों की मनः स्थिति का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। यही कारण है कि हमें छत्तीसगढ़ी के अतीतकालिक साहित्य के अधिक उदाहरण नहीं मिलते। तथापि, हमारे पास ऐसे प्रमाणों की कमी नहीं है कि हमें छत्तीसगढ़ी साहित्य को कुछ वर्षों तक ही सीमित कर देना पड़े। छत्तीसगढ़ी भाषा रचित साहित्य कि परम्परा का आरंभ भी लगभग एक हजार वर्ष पूर्व हुआ है। यह बात दूसरी है कि इस भाषा में प्रभूत मात्रा में साहित्य का सृजन यहाँ नहीं हुआ है। फिर भी, विभिन्न कालों में रचित साहित्य के पुष्ट प्रमाण आज भी हमें उपलब्ध है। जिनके आधार पर छत्तीसगढ़ी साहित्य का काल विभाजन किया गया है। छत्तीसगढ़ी भाषा में भी मध्ययुग तक पद्यात्मक रचनाएँ लम्बे अतीत से चली आ रही भारतीय साहित्य परम्परा के अनुसार ही हुई। संस्कृत के अलावा उत्तर भारत से आए पंडितों ने अवधी और ब्रज में धार्मिक व्याख्यान तथा तुलसीदास व सूरदास के भक्ति पदों का प्रचार–प्रसार किया तथा स्वयं अवधी व ब्रज में कवित्त लिखते रहे। इसी वातावरण में जिस प्रकार छत्तीसगढ़ी साहित्य का स्वरूप निर्मित होता रहा, उसी पर विचार समोचीन है।

छत्तीसगढ़ी साहित्य का युग–विभाजन

(क) आदि युग – गाथा युग (सन् 1000 से 1500 तक)

गाथा युग को छत्तीसगढ़ी साहित्य के इतिहास का "स्वर्ण युग" कहा जा सकता है और इस काल की सामाजिक–राजनीतिक स्थिति भी अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जा सकती है। गाथा युग के पूर्व बौद्ध धर्म की प्रचार भाषा "पालि" का छत्तीसगढ़ में सम्भवतः व्यापक प्रचलन था, क्योंकि भारत के अन्य प्रदेशों की तरह बौद्ध धर्म का प्रसार छत्तीसगढ़ क्षेत्र में भी हुआ था। गाथा युग का प्रारम्भ बौद्ध धर्म के पतन के बाद हुआ होगा, यह सम्भव है, लेकिन यह कहना भी कठिन है कि बौद्ध धर्म के अवसान काल के तुरन्त बाद ही छत्तीसगढ़ी का भाषा युग आरम्भ हुआ, क्योंकि छत्तीसगढ़ी को अर्धमागधी की पुत्री और अवधी की सहोदरा कहा जाता है, अतः यह निश्चित है कि उसका विकास अर्धमागधी के बाद ही उससे प्रस्फुटित होकर हुआ। सन् 875 ई. के लगभग चेदिराज कोकल्ल के पुत्र कलिंगराज ने इसे पुत्रः व्यवस्था प्रदान की। कलिंगराज के पुत्र रत्नेश ने ही रतनपुर की नींव डाली थी। सन् 1000 से 1500 ई. तक छत्तीसगढ़ में अनेकानेक गाथाओं की रचना हुई, जिसमें प्रेम और वीरता का अपूर्व विन्यास हुआ है। यद्यपि इन गाथाओं की लिपिबद्ध परम्परा नहीं रही, ये पीढ़ी–दर–पीढ़ी मौखिक रूप से अभिरक्षित होती आयी है। इस काल में घटी घटनाओं का वर्णन इनमें अत्यंत जीवंत रूप में हुआ है। इसी आधार पर इस युग को 'गाथा युग' कहा गया है। विषयों

के आधार पर इन गाथाओं का विवेचन इस प्रकार किया गया है –

प्रेम–प्रधान गाथाएँ

छत्तीसगढ़ की प्राचीन प्रेम–प्रधान गाथाओं में अहिमन रानी, केवल रानी, रेखा रानी और राजा वीरसिंह की गाथाएँ प्रमुख हैं। इन गाथाओं का आकार पर्याप्त दीर्घ है और नियोजन की शैली हिन्दी के वीरगाथाकालीन ग्रंथों की शैली का स्मरण करा देती है। दया शंकर शुक्ल ने अपने ग्रंथ 'छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का अध्ययन' में इनका विवेचन किया है, तथापि इनका मूल अंश बहुत अल्प मात्रा में दिया गया है। लोकगाथाकार इन गाथाओं को तीन से पाँच दिनों में सुनाकर पूर्ण करते हैं। ये गाथाएँ प्रारम्भ में प्रबन्ध–काव्य की शैली पर रची गई होंगी। इनमें प्रायः तुकांतता का अभाव भी है। यह माना जा सकता है कि ये गाथाएँ 'बैलेड्स' या चारण–काव्य की परम्परा में रची गई हैं। ये सभी गाथाएँ नारी–प्रधान हैं तथा संभवतः युग प्रकृति का अनुसरण करती हुई मंत्र–तंत्र तथा पारलौकिक शक्तियों को भी अपने भीतर सन्निहित किये हुए हैं। उस काल में बौद्ध धर्म की परवर्ती दशा उसके वज्रयान सम्प्रदाय के प्रवाह में बहती हुई सिद्धों की योगचर्या की अनुगत हो गई थी। इन गाथाओं में परवर्ती बौद्ध परम्पराओं से प्रभावित समाज की मनःस्थिति का सुन्दर दर्शन हुआ है।

धार्मिक और पौराणिक गाथाएँ

छत्तीसगढ़ी की प्रायः सभी गाथाओं में धार्मिक सूत्र अभिनिविष्ट हैं। 'फूलवासन' में सीता और लक्ष्मण की कथा है, जिसमें सीता लक्ष्मण से स्वप्न में देखे गये 'फूलवासन' नामक फूल लाने का अनुरोध करती हैं। लक्ष्मण अनेक कठिनाइयों को पार करने के उपरान्त पूर्णकाम होकर वापस लौटते हैं। यहाँ यद्यपि पात्रों का नियोजन प्राचीन है, तथापि घटना–क्रम पूर्णतया स्वच्छंद है। इसी स्थल पर हिन्दी के उन सूफी कवियों की स्मृति भी हो जाती है, जिन्होंने अपने मत–विशेष के प्रचार के लिए हिन्दुओं की पौराणिक गाथाओं का स्वच्छंद नियोजन किया था। ठीक ऐसी ही स्वच्छंद दृष्टि 'पंडवानी' की रचना में दिखाई देती है। इसमें पांडवों की कथा के आलम्बन से हरतालिका व्रत या तीजा के अवसर पर द्रोपदी के मायके जाने की अमिट साध के माध्यम से छत्तीसगढ़ की नारी की शापवत आकांक्षा का चित्रण किया गया है। द्रोपदी के अनुरोध पर अर्जुन उसे मायके पहुँचाने के लिए उद्यत होते हैं, किन्तु मार्ग में ही उन्हें बंदी बना लिया जाता है। ध्यान देने की बात यह है कि यहाँ जिन घटनाओं का आनयन किया गया है वे पौराणिक नहीं है तथा इनके माध्यम से भी लोक जीवन की मौलिक साधों का ही वर्णन किया गया है। इस दृष्टि से अलौकिक तथा चमत्कारपूर्ण घटनाओं का चयन विशेष उल्लेखनीय है, जो वीरगाथाकालीन प्रबन्ध–काव्यों की एक सुविख्यात कथा–रूढ़ि है। गाथाओं की यह परम्परा सम्पूर्ण मध्ययुग में व्याप्त है।

वस्तुतः मनुष्य के मन में जो भावोद्वेलन, कल्पना, व्यापिकायें, अनुभूतिक अभिव्यक्ति, व्यतिरेक, अनुरंजना, आह्लाद, विषाद, संयोग–वियोगादिक जीवन दशाओं के ज्वार भाटे जब भाषा–बोली का आश्रय लेते हैं, तो उनका फेन ही साहित्य के रूप में प्रकट होता है। जातियों के सामाजिक जीवन का प्राचीन–अर्वाचीन और भविष्य उसमें प्रतिच्छापित होकर मनुष्य को उसके अतीत, वर्तमान और भविष्य के बंधन में बाँधे रहकर आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता है, अतः भाव–कल्पनाओं की प्रस्तुति एक ऐसी सत्य की श्रृंखला कड़ियों का निर्माण करती है, जो मनुष्य को उत्साहपूर्वक अपने परिवेश को परिष्कृत करने के लिए आगे बढ़ाती रहती है और साहित्य वैचारिक विकल्पों के मसाले से निर्मित महल होते हुए भी मानव जीवन का सबसे दृढ़ आवास बना रहता है और मनुष्य उसे हर तरह को विविध रंग रूपों में सज्जित करता रहता है, जिन्हें वह अपनी पूर्व परम्पराओं, रूढ़ियों, प्रवृत्तियों में सबसे सरलतापूर्वक प्राप्त करता है, इसी कारण वह सत्य के चरित्र को अनेक तरह साहित्य का अंग बना देता है, घटनात्मक सत्य की उसे इतनी चिन्ता नहीं होती। इसी कारण यह प्रवृत्ति छत्तीसगढ़ी के साहित्य में दिखाई देती है।

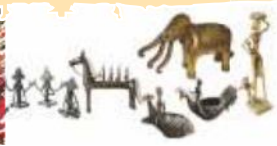

(ख) मध्य काल – भक्ति–युग (सन् 1500 से 1900 तक)

भारत में इस्लाम के प्रवेश काल से ही उसका राजनीतिक परिदृश्य परिवर्तित हो गया था जिसने बाबर के आगमन काल तक जो उथल–पुथल प्रदान की, उसका परिणाम हमें भारत की सभी भाषाओं में भक्ति युग के रूप में दिखाई देता है। छत्तीसगढ़ी साहित्य भी उससे अछूता नहीं है। सन् 1500 से 1900 ई. तक का युग छत्तीसगढ़ की दृष्टि से राजनीतिक उलट–फेर और अशांति का युग रहा है। मध्यकाल के प्रारम्भ में ही छत्तीसगढ़ पर बाहरी नरेशों के आक्रमण होने लगे थे तथा संभवतः छत्तीसगढ़ पर मुसलमानों का सर्वप्रथम आक्रमण रतनपुर के राजा बाहरेन्द्र के काल में सन् 1536 ई. में हुआ थौ। यद्यपि इस युद्ध में मुसलमानों की पराजय हुई थी, फिर भी उनका आतंक छत्तीसगढ़ में सैकड़ों वर्षों तक बना रहा। यही कारण है कि इस काल में रचित गाथाओं में मुस्लिम आक्रान्ताओं के वर्णन के साथ ही शौर्य और पराक्रम के भाव भी संचित हैं। इस युग कि साहित्य–चर्चा मूलतः तीन धाराओं में प्रभावित होती है–

(1) मध्य–युग की वीर गाथाएँ,

(2) धार्मिक एवं सामाजिक गीत धारा,

(3) संत धरमदास।

(1) मध्य–युग की वीर गाथाएँ– मध्य–युग की वीरगाथाओं में 'फूलकुँवर', 'देवी गाथा' और 'कल्याण साय की गाथाएँ' प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त 'गोपल्ला गीत', 'रायसिंघ के पवारा', 'ढोला मारू' और 'नगेसर कइना' के नाम से प्रचलित लघु गाथाएँ भी विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय हैं। 'लोरिक चँदैनी', 'सरबन गीत' और 'बोधरु गीत' की शैली भी इन्ही लोकगाथाओं के समान है। फूलकुँवर की गाथा में वीरांगना फूलकुँवर के मुसलमानों से किये गये युद्ध का चित्रण किया है। गाथा में फूलकुँवर को राजा जगत की पुत्री बताया गया है, तथापि इतिहास में इस बात का प्रमाण नहीं मिलता, परंतु यह भी एक निश्चित यथार्थ है कि भारत में आधुनिक इतिहास लेखन पध्दति के अनुसार इतिहास लेखन का प्रचलन नहीं था, अतः हमें जन विश्वास में उतर कर आई ऐतिहासिक महत्व कि घटनाओं को इतिहास का भाग ही मानना चाहिए, क्योंकि प्रायः श्रुति परम्परा का भी कोई–न–कोई आधार होता है। गाथा में जिस प्रकार फूलकुँवर का पराक्रम चित्रित है, वह झाँसी की रानी की वीरता के मुकाबले कम नहीं है। कल्याणसाय की गाथा में रतनपुर के सम्राट बाहरेन्द्र के पुत्र कल्याणसाय की वीरता का अंकन किया गया है। राजा कल्याणसाय मुगल सम्राट जहाँगीर का समकालीन था। इस गाथा में कल्याणसाय के वीर भट गोपाल राय का शौर्य भी व्यंजित हुआ है। 'गोपल्ला गीत' में भी इसी कथानक का उपयोग किया गया है। ये सभी गाथाएँ प्रबन्धकाव्य की शैली में लिखी गयी है तथा इसमें मध्य–युग की प्रायः सभी कथानक रूढ़ियों का परिपाक हुआ है। 'देवी गाथा' में मध्य–युग के इतिहास के संबंधित अनेक रूप मिलते हैं, जिनमें अकबर का चरित्र विशिष्ट रूप से उभरता है। अकबर को यहाँ देवी के पुजारी के रूप में चित्रित किया गया है। अकबर का राजनीतिक सूझ–बूझ के कारण इसे हिन्दू समाज में भी लोकप्रियता प्राप्त हुई थी। इतिहास बताता है कि उसने अपने जीवन में अनेक हिन्दू पद्धतियाँ अपनाई थीं। सम्भव है शक्ति–पूजा कि प्राचीन हिन्दू परम्परा को भी उसने आदर दिया हो।

(2) धार्मिक एवं सामाजिक गीत धारा– छत्तीसगढ़ी के मध्य–युग की धार्मिक और सामाजिक गीत धारा का समारम्भ कबीर प्रभावित आंचलिक सम्प्रदायों एवं पंथो के माध्यम से होता है। इनमें कबीर पंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा तथा सतनाम पंत प्रसिद्ध है। इस युग की जनपदीय संस्कृति के उत्तोलन में इन दोनों पंथों ने अत्यधिक योगदान दिया है तथा इन्हीं पंथों के माध्यम से निर्गुण मतावलंबी रचनाएँ भी प्रचुरता से रची गई हैं। कबीर–पंथ का निर्माण

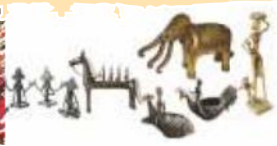

कबीरदास के शिष्य धरमदास की प्रेरणा से हुआ। छत्तीसगढ़ में स्थापित कबीर–पंथ का योगदान छत्तीसगढ़ी–साहित्य के विकास के संदर्भ में इसलिए भी अतिशय महत्वपूर्ण हो जाता है कि उसी के माध्यम से हम छत्तीसगढ़ी–साहित्य का प्रथम लिपिबद्ध स्वरूप प्राप्त करते हैं।

वस्तुतः भक्ति के धार्मिक चरित्र में दर्शन का भी गहरा रंग मिला होता है। मनुष्य कि प्रच्छन्न भावनाओं में विभिन्न संकल्पनाएँ उसे दार्शनिक उद्‌भ्रान्तियों के वशीभूत कर दिया करती हैं और निश्चयात्मक तत्वों की खोज करने को प्रेरित करती हैं, क्योंकि वह परिणाम प्राप्त करने की राह पकड़ने की अथक चेष्ठा करता है। अन्यथा एक ही सोच अनेक तरह से प्रकट नहीं होती। धार्मिक सोच में भी इसी कारण जब वैचारिक उद्वेलन उठते हैं तो लोग अपने समभावी उद्वेलनों की छाया में आश्रय प्राप्त करके किसी–न–किसी आध्यात्मिक आस्था के प्रति समर्पित होते हुए देखे जाते हैं, अतः भक्ति और दर्शन अनेक मत–मतान्तरों में मानव जीवन को विभक्त कर देता है। इसी कारण तत्कालीन छत्तीसगढ़ी–साहित्य पर कबीर पंथ का भी प्रभाव पड़ा। स्वाभाविक है कि इसके परिप्रेक्ष्य में सामाजिक जीवन की तात्कालिक स्थितियाँ रहीं होंगी। यह बात बड़ी स्वाभाविक है कि साहित्य चाहे धार्मिक, राजनीतिक आदि किसी भी पृष्ठभूमि पर रचित हुआ हो, वह साहित्यकार को समाजिक स्थिति के प्रति आग्रहित अवश्य रखता है, क्योंकि मनुष्य स्वभाव से ही अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण कभी सांसारिक जीवन के प्रति अनासक्त या निरपेक्षित नहीं होता।

(3) संत धरमदास– संत धरमदास कबीरदास के पट्ट शिष्य थे। उनका जन्म कसौंदा ग्राम के वैश्य परिवार में हुआ था। उनका समय 16वीं, 17वीं शताब्दी माना जाता है। उन्होंने कवर्धा में कबीर पंथ का शुभारम्भ किया था। कहा जाता है कि कवर्धा का पूर्व नाम 'कबीर धाम' था। संत धरमदास में कबीर की आत्मानुभूति, ईश्वरीय विरह, तथा परम तत्व के साक्षात्कार से उत्पन्न आत्मोत्फुल्लता के पथ का अग्रिम विकास हुआ। इनके अतिरिक्त उनके गीत उच्च कोटि के काव्यात्मक उद्‌गारों से भी संपृक्त हैं। अन्य भक्त कवियों के समान संत धरमदास भी सतगुरु को प्रणिपात करते हैं तथा ईश्वर–साक्षात्कार के रत्न–पदार्थ को प्राप्त करने के आकाँक्षी हैं–

"जमुनिया की डार मोरी टोर देव हो
एक जमुनिया के चउदा डारा, सार सबद ले के मोड़ देव हो।"

"सतगुरु हमरे ज्ञान जौहरी, रतन पदास्थ जोर देव हो।
धरम दास के अरज गोसाईं, जीवन के बाँधे डोर छोरे देव हो।"

कबीरदास की भाँति धरमदास भी अपनी आत्मा–सुन्दरी को प्रियतम परमात्मा की चिरवियुक्त वधू समझते हैं।

"सँइया महरा, मोरी डोलिया फँदवौ।
काहे के तोर डोलिया, काहे के तोर पालकी, काहे के ओमा बाँस लगावो।"

"ज्ञान दुली झरि दसावौ, नाम के तकिया अरध लगावौ।
धरमदास बिनवै कर जोरी, गगन मन्दिर का पिया दुलरावौ।"

संत धरमदास छत्तीसगढ़ी के प्रथम कवि हैं, जिन्होंने लोकगीतों की सहज सरल शैली में निगूढ़तम दार्शनिक भावनाओं की अभिव्यक्ति की, किन्तु उनकी यह उदात्त परम्परा आगे विकसित नहीं हो पाईं। यद्यपि सतनाम पंथ के अन्तर्गत

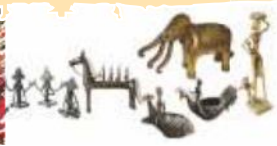

कतिपय काव्य–रचनाएँ विशेष रूप से प्रचलित रही हैं।

सतनाम पंथ की रचनाएँ

सतनाम पंथ की स्थापना छत्तीसगढ़ के महान संत घासीदास ने की थी। संत घासीदास छत्तीसगढ़ के 'गिरौद' नामक गाँव एक दलित घर पैदा हुए थे। उनका जीवन आध्यात्मिकता के आलोक से भार–वर था। उन्होंने लोगों को सिखाया कि 'सतनाम' का जाप करना चाहिए, माँस और मछली का परित्याग करना चाहिए और अहिंसा–व्रत में दृढ़ रहना चाहिए। उनकी वाणी में संत कबीर के उपदेशों की ही ध्वनि गूँज रही है। यद्यपि कबीर पंथ और सतनाम पंथ मूलतः एक हैं तथापि गुरु–परम्परा के कारण ये एक दूसरे से पृथक् हो गये हैं।

सतनाम पंथ की रचनाएँ भी मूलतः सांसारिक सम्बन्धों की असारता और ईश्वरीय कृपा की प्राप्ति की अभिलाषा का चित्रण करती हैं। 'चल हंसा अमर लोक जइबो' में मायावी संसार की स्वार्थपरता को स्पष्ट करते हुए ईश्वर के नाम को शाश्वत शांति के कोड के रूप में चित्रित किया गया है।

चलौ–चलौ हंसा अमर लोक जइबो, इहाँ हमर संगी कोने नइये।

एक संगी परभू सतनाम हे, पानी मन ला मनाथै।

जन्म मरन के सबो दिन संगी, ओही सरग अमराथै।

इसी गीत की तरह अन्य गीतों में भी कबीर की अन्योक्तियों की शैली का सफल अनुकरण मिल जाता है। इस दृष्टि से 'खेलथे दिन चार मइहर मा' जैसे गीत उल्लेखनीय हैं।

स्फुट रचनाएँ

मध्य–युग का तीसरा स्वर स्फुट रचनाकारों–गोपाल, माखन, रेवाराम, लक्ष्मण और प्रहलाद दुबे आदि का है। गोपाल कवि तथा उनके पुत्र माखन कवि रतनपुर के निवासी थे तथा कलचुरि नरेश राजसिंह के समकालीन थे। इनकी 'जैमिनी', 'अश्वमेघ', 'सुदामाचरित', भक्त चिंतामणि', 'छंदविलास' नामक रचनाओं का उल्लेख प्रायः किया जाता है। यद्यपि गोपाल कवि में समग्रतः छत्तीसगढ़ी में पद्य–रचना नहीं की है, तथापि उनकी काव्य भाषा में छत्तीसगढ़ी का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। इसी प्रकार बाबू रेवाराम कायस्थ ने भी दाशाधिक ग्रन्थों की रचना की है। 'भोसला वंस प्रशस्ति' के लेखक लक्ष्मण कवि का नामोल्लेख भी इस संदर्भ में उपयुक्त है, जिनके काव्य में अंग्रेजों के नृशंस अत्याचार का सर्वप्रथम आँकलन हुआ है। तथापि सारंगढ़ निवासी प्रहलाद दुबे का कृतित्व इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है कि उनकी 'जयचंद्रिका' में छत्तीसगढ़ी का प्रकृत स्वरूप अभिव्यक्त हुआ है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियों को देखा जा सकता है–

तुम करहु जैसे जौन, हम हवैं सामिल तौन।

महापात्र मन मह अन्दाजे, हम ही हैं संबलपुर राजे।

(ग) आधुनिक युग (सन् 1900 से अब तक)

छत्तीसगढ़ी का आधुनिक युग साहित्य की विभिन्न विधाओं के विकास का सशक्त द्योतक है। इस युग में गद्य के भी विविध प्रकारों की संरचना हुई है, तथापि काव्य के क्षेत्र में वह पीछे नहीं है। प्रायः ही पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन व्यावसायिक पक्ष की हानि सहन नहीं कर पाता, फलतः परिनिष्ठित छत्तीसगढ़ी के मनमूल्यों की स्थापना होने के बावजूद उनका व्यापक प्रसार नहीं हो पाया तथा छत्तीसगढ़ी के विविध गद्यकार परिनिष्ठित छत्तीसगढ़ी का प्रयोग न कर अपनी विशिष्ट आंचलिक भाषाओं में ही साहित्य–सृजन करते रहे।

प्रसिद्ध छत्तीसगढ़ी लोक कथाऐं

(1) ढोला मारू

गढ़ नरौल में राजा नल शासन करते थे। उनके पुत्र का नाम ढोला था। ढोला का विवाह मारू के साथ हुआ था। सुन्दरता में दोनों एक–दूसरे से बढ़–चढ़कर थे। जब राजा नल वृद्ध हो गये तब उन्होंने अपना राज–पाट ढोला को सौंप दिया। साथ ही उसे चेतावनी भी दी बेटा सब दिशाओं में, सब देशों में जाना किन्तु पूर्व दिशा में स्थित गढ़पिंगला भूल कर भी मत जाना। वहां रेवा मालिन जिसे हरेवा भी कहते हैं, अपनी बहन परेवा के साथ रहती है।

एक बार ढोला पर्यटन के निकला। सभी दिशाओं के देशों को धूम लेने के पश्चात उसके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि आखिर क्या बात है कि पिताजी ने गढ़ पिंगला जाने से मना किया है उसने निश्चय किया कि गढ़ पिंगल जाकर इस रहस्य से परिचित हुआ जाए। मार्ग में उसकी भेंट धान कूटने वाली सात बहिनों से हुई। ढोला ने उनसे रेवा मालिन के बगीचे के रास्ता पूछा। उनमें से एक ने कहा–मैं ही रेवा मालिन हूं। किन्तु, ढोला ने विश्वास नहीं किया वह आगे बढ़ गया।

कुछ दूर जाने पर ढोला को एक गांव मिला । गांव की गली में बच्चे खेल रहे थे। ढोला ने उनसे पूछा कि रेवा मालिन के घर का रास्ता किधर है सही–सही बताओगे तो तुम्हें गुड़ चिवड़ा दूंगा। उन बच्चों ने गढ़ पिंगला का रास्ता बता दिया। उनके बताये रास्ते पर चल कर ढोला गढ़ पिंगला पहुंच गया।

गढ़ पिंगला में सतखंडा महल था। महल की फुलवारी में रेवा और परेवा दोनों बहनें रहती थीं। दोनों बहनें बहुत सुन्दर थीं। ढोला ने उन्हें अपना परिचय दिया। परिचय पाकर दोनों बहनें बड़ी प्रसन्न हुई और उसे बड़े आदर सत्कार के साथ बैठाया। वे दोनों बहनें भी ढोला के सुन्दर रूप पर मुग्ध थीं। ढोला दिन–रात उन्हीं के पास रहे, इस उद्देश्य से रेवा–परेवा ने मंत्र पढ़कर उस पर पीला चावल छिड़क दिया। ढोला भी उनके मंत्र के प्रभाव से उन पर मोहित हो उनके वश में रहने लगा। रहते–रहते बारह वर्ष बीत गये।

उधर ढोला की रानी मारू प्रतीक्षा करती–करती थक गयी। ढोला को लेकर वह हर क्षण चिन्ता मग्न रहती थी। कोई भी ढोला की खोज–खबर लाने वाला नहीं था। उसे उदास और हताश देख कर उसके प्रिय सुआ ने कहा–

" मन मा झन चिन्ता करौ, बात सुनौ तुम मोर।
मैं सुआ ले आनि हौं, ढोला कुवंर के सोर।।
आंचर चीर कागद बना, काजर के मसियार।
लिखौ दसेरो तक निचट, ढोला आय हमार।"

मारू ने वैसा ही किया। सुआ को पिंजरे से बाहर निकाल कर चिट्ठी उसके गले मे बांध दी। उसे घी शक्कर खिलाकर बिदा किया। कई दिन, कई रात उड़ते–उड़ते सुआ गढ़ पिंगला पहुंचा और महल के मुंडेर के ऊपर बैठ गया और ये पंक्तियां कहीं –

"तोला हने ढोला कड़क बिजली के इने हे तोला तुसार
तोला डांटे हे रेवा–परेवा के बिहाता के सुरता भुलाय

ढोला सुआ की आवाज पहचान गया। वह सुआ के पास गया। सुआ ने मारू की चिट्ठी उसे दी। चिट्ठी पढ़कर उसे मारू की याद सताने लगी। उसी समय परेवा की दृष्टि इन दोनों पर पड़ी। उसने रेवा को बताया। रेवा ढोला को महल के भीतर ले गई। ढोला ने सुआ को भी अन्दर बुला लिया सुआ ढोला के कंधे पर बैठ गया। रेवा–परेवा ने उन दोनों को खूब खिलाया–पिलाया। थोड़ी देर बाद ढोला किसी काम से कमरे के बाहर निकला तो रेवा भी उसके साथ हो ली। जाते–जाते रेवा ने परेवा को इशारे में कुछ कहा उनके बाहर जाते ही परेवा सुआ को पकड़कर चूल्हे के पास गई। वह उसे आग में डालना ही चाहती थी कि सुआ ने उसकी उंगली में जोर से काटा। परेवा के हाथों से छूट कर सुआ उड़ कर महल के कंगूरे पर जा बैठा।

ढोला को यह सब मालूम हो गया। किन्तु क्या करता ? उसने मारू के नाम पत्र लिखा और रेवा–परेवा से छिपा कर सुआ के गले में बांध दिया। सुआ ने कहा कि वह तुरंत घर चला जाए। सुआ जब घर पहुंचा तो मारू को बड़ी प्रसन्नता हुई । पत्र से सारा समाचार भी प्राप्त हो गया। मारू सुआ के कार्य से इतनी प्रसन्न हुई कि उसके लिए तुरंत सोने का पिंजरा बनवा दिया।

उधर ढोला सुआ को विदा करके गढ़पिंगला से भाग निकलने का उपाय सोचने लगा। वहां एक दासी थी जिससे ढोला की

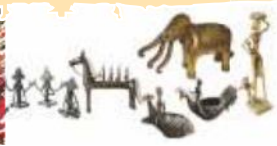

अच्छी पटती थी। दासी भी ढोला के दुःख को समझती थी। उसने सुझाया कि रेवा के साथ पासा खेलते समय उसे यह पान खिला देना। इसे खाते ही वह बेहोश हो जायेगी। परेवा तो फुलवारी में है। तुम चुपचाप महल से बाहर निकल जाना। वहां ंट खड़ा मिलेगा। उस पर सवार होकर तुम अपने घर चल देना।

ढोला मारू की कथा राजस्थान में भी 'ढोला मारवणी' के नाम से प्रचलित है। श्री प्यारेलाल गुप्ता ने अपने ग्रंथ प्राचीन छत्तीसगढ़ में ढोला मारू की कथा कुछ भिन्नता के साथ दी है, किन्तु मूल कथा एक है। डॉ.दयाशंकर शुक्ल ने अपने ग्रंथ 'छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन' में ढोला की कथा कुछ परिवर्तित रूप में प्रस्तुत जैसे की हैं। इस कथा में ढोला के पौरूष और बुद्धि कौशल का विस्तुत विवरण है। किन्तु पं. लोचनप्रसाद पांडेय वाले ग्रंथ में दी गई ढोला की कथा में ढोला को बिलकुल असहाय बताया गया है।

मौखिक रूप में प्रचलित होने के कारण हमें एक ही कथा अनेक रूपो मे उपलब्ध होती है। यदि भिन्न–भिन्न स्थानों से इन कथा रूपों को संकलित किया जाये तो उसके सही रूप को ढूंढा जा सकता है। स्मृति पर आधारित होने के कारण कथा के कुछ अंश छूट जाते हैं, कुछ अंश नये जुड़ जाते हैं।

(2) काम कन्दला ––

छततीसगढ़ में डोंगरगढ़ एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। यहां बम्बलेश्वरी (विम्लेश्वरी देवी) का प्रसिद्ध मंदिर है। नवरात्रि के पर्व के अवसर पर एक लाख से अधिक श्रद्धालु देवी के दर्शन के लिये देश के सुदूर स्थानों से प्रतिवर्ष आते हैं। प्राचीनकाल में डोंगरगढ़ का नाम कामावती नगर था। राजा कामसेन यहां के राजा थे। वे बड़े कला प्रेमी राजा थे। उनका राज्य धन–धान्य और ऐश्वर्य से भरपूर था।

राजा कामसेन के राज्य में काम कन्दला नाम की एक राजनर्तकी थी। वह अनिंद्य सुन्दरी, नृत्य तथा संगीत में अद्वितीय थी। एक रात राजा की रंगशाला में कामकन्दला अपनी नृत्य कला और संगीत कला का प्रदर्शन कर रही थी, प्रतिष्ठित नागरिकों तथा दरबारियों से रंगशाला भरी हुई थी, लोग मंत्रमुग्ध उसकी कला की अद्भुत प्रदर्शन देख रहे थे, एक युवक रंगशाला के द्वार पर उपस्थित हुआ। उसका नाम माधवानल था।

माधवानल पुष्पावती नगर का निवासी था। वह अत्यंत गुणवान, संगीतज्ञ और वाद्यकला में निपुण तथा सुदर्शन था। उसे व्याकरण और ज्योतिष का भी अच्छा ज्ञान था। काम कन्दला के रूप तथा कला की प्रशंसा सुनकर वह कामावती नगर के लिये चल पड़ा। नगर में पहुंचा तब उसे मालूम हुआ कि राजकीय रंगशाला में कामकन्दला की कला का प्रदर्शन हो रहा हैं। वह रंगशाला पहुंचा तो द्वारपाल ने उसे रोक दिया। बड़े अनुनय–विनय के पश्चात भी द्वारपाल ने उसे भीतर नहीं जाने दिया तब हताश होकर वह द्वार पर ही बैठ गया । घुंघरू और वाद्ययंत्रों की ध्वनि वहां से भी स्पष्ट सुनाई दे रही थी। माधवानल बड़े ध्यान से सुन रहा था। द्वारपाल भी उसी के पास बैठकर संगीत का आनंद लेने लगा। थोड़ी देर सुनने के बाद माधवानल ने द्वारपाल से कहा– नर्तकी के एक पैर के घुंघरू में एक दाना कम है, अमुक वादक के एक हाथ का अंगूठा नहीं है। उसकी बात को परखने के लिये द्वारपाल भीतर गया। उसने दोनों बातें सही पायीं। उसने विचार किया कि ऐसे कला पारखी के आगमन की सूचना राजा को अवश्य देनी चाहिये । उसने माधवानल द्वारा कहीं बातें राजा को बता दी। राजा भी उसकी बातें सुनकर चकित रह गया। उसने उसे तुरंत भीतर लाने का आदेश दिया।

माधवानल रंगशाला में गया तो राजा कामसेन ने उसका स्वागत किया। कुछ समय बीतने पर माधवानल कामकन्दला पर आसक्त हो गया। उसके रूप और गुण पर तो वह पहले ही मुग्ध था। कामकन्दला भी उसके प्रेमपाश में बंधती चली गई। यह बात राजा को मालूम हो गई। वह माधवानल पर बड़ा क्षुब्ध हुआ। उसने माधवानल को अपने राज्य से निष्कासित कर दिया।

माधवानल कामावती नगर से बहिष्कृत होकर उज्जैन पहुंचा। उसके मन में कामकन्दला को प्राप्त करने का निश्चय कर लिया। गुणी तो था ही उज्जैन के राज दरबार में उसने स्थान बना लिया। राजा से भी मित्रता स्थापित कर ली। किन्तु, विरह के कारण वह प्रायः उदास रहा करता था। एक दिन उज्जैन के राजा ने उसकी उदासी का कारण पूछ ही लिया। माधवानल ने उससे कोई भी बात नहीं छिपाई उसकी बातों को सुनकर राजा का हृदय द्रवित हो गया। राजा ने उसे आश्वस्त किया कि उसे कामकन्दला अवश्य प्राप्त होगी।

उज्जैन के राजा ने कामावती पर अमण कर विजय प्राप्त की। उसने कामकन्दला का हाथ माधवानल को सौंप दिया। माधवानल कामकन्दला के साथ कामावती नगर में आनंदपूर्वक रहने लगे। लाल प्रद्युम्न सिंह लिखते हैं' डोंगरगढ़ के पहाड़ पर एक नष्टप्राय महल है जो कामकन्दला के महल के नाम से प्रसिद्ध है। अब तो वह अत्यंत जीर्ण अवस्था में स्थित है।' संक्षेप में इस कथा का यही सार है। कथा अत्यंत प्राचीन है। आनंदधर ने इस कथा के आधार पर संस्कृत भाषा में माधवानल नामक नाटक की रचना की। सन् 1853 में अकबर के दरबारी कवि आलम ने इस कथा को पद्य–बद्ध किया। 'माधवानल की कथा' नामक एक हस्तलिखित पुस्तक बनारस के पुस्तकालय में

कहै। यह पुस्तक सन् 1755 की है। हिन्दी साहित्य कोश में प्रेमाख्यान काव्य शीर्षक के अंतर्गत प्रचलित लोकप्रिय कथाओं की चर्चा में माधवानल–कामकन्दला का उल्लेख है।

इस कथा का आशय यह है कि नृत्य और संगीत कला के क्षेत्र में छत्तीसगढ़ ने बड़ी उन्नति की थी। कथा की नायिका कामकन्दला छत्तीसगढ़ की इस कला का प्रतिनिधित्व करती थी। यहां की कला की कीर्ति दूर–दूर तक फैली थी। यहां की नृत्य और संगीत कला की झलक कुछ प्राचीन मंदिरों में उत्कीर्ण करके प्रस्तुत करने के प्रयास किया गया है।

(3) लोरिक चंदा –

एक बार जब बावन वीर छः माह के लिये योग–साधना में तल्लीन था, चन्दा की दृष्टि उसी गांव के युवक लोरिक पर पड़ी। लोरिक के गठे हुए शरीर और सुदर्शन रूप पर चंदा मुग्ध हो गयी बावन वीर से उसे कोई सुख प्राप्त नहीं था। उसके महल में वह एक कैदी के रूप में रहती थी। लोरिक को देखकर वह अपने मन पर नियंत्रण नहीं रख विद्‌ग्ध रहने लगी। जब विरह की आंच असह्य हो गई, तो उसने एक दूती (कुटनी) के माध्यम से लोरिक से संपर्क साधा और उसे महल में आमंत्रित किया। बावन वीर तो छः माह के लिए सारी दुनिया से बेखबर था।

लोरिक को जब चंदा का संदेश मिला तो वह भी उससे मिलने को व्याकुल हो गया। उसके अनिंद्य रूप और यौवन की चर्चा तो वह पहले ही सुन चुका था। अब उसका संदेश प्राप्त करने की लालसा भी बलवती हो गयी। किंतु बावन वीर के महल की चाहर दीवारी इतनीची थी कि उसे लांघना असंभव था। द्वारों पर कड़ा पहरा था। बावन वीर ने महल की रक्षा के लिए सांप और बंदर भी पाल रखे थे। गाय–भैंस तो थीं ही जो अपरिचित व्यक्ति को देख भंयकर आवाज के साथ दौड़ाती थी। इन बाधाओं को पार करने के चंदा ने दूती के माध्यम से लोरिक को उपाय भी बता दिये थे।

लोरिक महल के द्वार पर पहुंचा। द्वारपालों के हाथों में उसने कुछ रूपये रख दिये (महाभारत में इसे गुप्त धन कहा गया है यह उपाय आज भी सर्वत्र लोकप्रिय और अचूक है।) द्वार के अंदर प्रवेश करने पर उसे गाय भैंसों का झुंड मिला। उसने उसके सामने चारा डाल दिया। कुछ आगे बढ़ने पर उसकी भेंट वानर दल से हुई। उसने उनके सामने चना डाल दिया। अंतिम मोर्चे पर सर्प पहरा दे रहे थे। लोरिक ने उनके सामने दोहनी भर दुध रख दिया। अन्त में वह उस स्थान पर पहुंचा जहां चंदा निवास करती थी। खिड़की से उसने डोर लटका रखा था लोरिक उस डोर के सहारे चन्दा के पास पहुंचने में सफल हो गया।

मेल–मिलाप और वार्तालाप में रात कब बीत गयी, पता नहीं चला। उषा की लालिमा देख कर लोरिक हड़बड़ा कर घर लौटने को तत्पर हुआ। हड़बड़ी में उसने अपनी पगड़ी के बदले चन्दा की साड़ी सिर पर लपेट ली और जिस उपाय से महल में प्रवेश किया था उसी उपाय से वह बाहर निकल आया।

प्रातःकाल धोबन लोरिक के घर कपड़े देने गयी तो वहां चन्दा की साड़ी दिखाई पड़ी। चन्दा के कपड़े भी वहीं धोबन धोती थी। चन्दा की साड़ी वह तुरंत पहचान गयी। उसने लोरिक से पूछा–चंदा की साड़ी तुम्हारे पास कैसे आयीं ? लोरिक के पास इसका कोई तर्कसम्मत बहाना तो था ही नहीं। अंत में उसने सच बात उगल दी। लोरिक ने धोबन से कहा यह साड़ी चुपके से चन्दा के पास पहुंचा दो और मेरी पगड़ी चुपचाप वापस ला दो। इस कार्य के लिए लोरिक ने वही उपाय आजमाया था। इसके पश्चात् तो वह धोबन ही उन दोनों के मध्य दूती का कार्य सम्पन्न करने लगी।

गुप्त मिलन का सिलसिला कुछ समय तक चलता रहा। बावन–वीर की छःमासी साधना अवधि के समाप्त होने के दिन समीप थे। ऐसी स्थिति में चन्दा ने प्रस्ताव रखा कि यह राज्य छोड़कर कहीं और भाग चलें। लोरिक को यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं था किन्तु चन्दा हाथ धोकर पीछे पड़ गयी। अंत में कोई उपाय न देख लोरिक सहमत हो गया। चंदा को लेकर वह भाग निकला।

गांव के बाहर दइहान में चन्दा का मामा रहता था। लोरिक के साथ चन्दा को देख कर वह समझ गया। उसने चन्दा को बहुत समझाया किन्तु उसके पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। भागते–भागते उन्हें घनघोर जंगल मिला। जंगल के बीचों–बीच एक महल था। उन दोनों ने वहीं अपना डेरा डाल दिया। महल के सब खिड़की–दरवाजे मजबूती के साथ बन्द कर दिये।

छःमाह की अवधि समाप्त होने पर बावनवीर जब जागृत अवस्था में आया तो उसे मालूम हुआ कि उसकी पत्नी लोरिक के साथ भाग गयी है। पता लगाते–लगाते वह जंगल के बीच स्थित महल में पहुंचा लेकिन वह लाख कोशिश करने पर भी दरवाजे को तोड़ नहीं पाया। हारकर वह अपने घर लौट गया। सच है, सोने वालों की धन सम्पत्ति, यहां तक कि पत्नी भी उसे छोड़ कर चली जाती है।

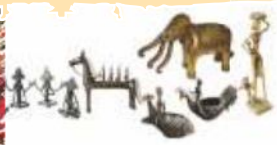

" द ग्राम ऑफ द छत्तीसगढ़ी डायलेक्ट " में यह कथा इसी रूप में दी गयी है। पता नहीं यह कथा का संक्षिप्त रूप है अथवा सम्पूर्ण रूप। किन्तु इस कथा में चरित्रों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हुआ है। इसे मूल कथा का संक्षिप्त रूप ही समझना चाहिए। यह कथा बिलासपुर जिले से संकलित की गयी थी।

लोरिक–चंदा की यह कथा तनिक भिन्नता के साथ रायपुर जिले में प्रचलित है। भाठापारा निवासी कवि संतराम साहू ने इस कथा के आधार पर एक छोटे से खण्ड काव्य की रचना की है। इस खण्ड काव्य में कवि ने कथा के विस्तृत रूप को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

गउरागढ़ में महर नाम का राजा निवास करता था। उसी गांव में कठायत नामक अहीर भी रहता था, जो राजा के गाय–भैसों की देख रेख करता था। यहीं रजाई गुरू भी रहते थे, जिसके अखाड़े मे लाठी चालन आदि करतब सिखाये जाते थे। एक बार दीवालीइ त्यौहार के समय राजा की प्रिय भैंस सोनसागर एवं झारिंगा को कोई हकाल कर कहीं ले गया। राजमहल में बड़ी उदासी छा गयी। कठायत ने सुना तो उसे ले जाने पर बड़ा ोध आया। वह उनकी खोज में निकल गया। अन्ततः वह उन भैसों को ढूंढ कर लाने में सफल हो गया। कठायत के इस कार्य से राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ। उसने कठायत से कहा कि तुम्हारी जो इच्छा हो मांग लो। कठायत ने नम्रतापूर्वक कहा कि तुम्हारी कृपा बनी रहे और मेरे बच्चों को आपके राज्य में आश्रय मिलता रहे यही मेरे लिए पर्याप्त है। राजा ने कहा– इससे मुझे संतोष नहीं होगा। मैं तुम्हारे लिए वह करना चाहता हूं, जो आज तक किसी राज्य ने नहीं किया होगा। मेरी रानी गर्भवती है। यदि मुझे कन्या रत्न प्राप्त हुआ तो मैं उसका विवाह तुम्हारे पुत्र के साथ करवाउंगा। कठायत ने कहा– महाराज कहां राजा भोज और कहां गंगू तेली। समधियाना तो बराबरी में ही अच्छा लगता है। फिर, अभी किसे पता कि कन्या होगी या राजकुमार। इसलिए ऐसा सपना देखना मुझ जैसे हैसियत वाले आदमी के लिए ठीक नहीं। राजा ने मूंछों पर ताव देते हुए कहा– हाथी के दांत और मर्द के मुख से निकले वचन कभी वापस नहीं होते।

लोरिक इसी कठायत का दुलारा बेटा था। हष्ट–पुष्ट और सुन्दर। सभी बालकों में वह अलग ही दिखाई पड़ता था।

उधर रानी ने कन्या रत्न को जन्म दिया। वह भी देखने में अति सुन्दर। मां बाप ने उसका नाम रखा चंदा। प्यार से चंदैनी भी पुकारते थे। चलने–फिरने के लायक हुई तो लोरिक और उसके संगी–साथियों के साथ खेलती,घुमती–फिरती थी।

इधर लोरिक कुछ बड़ा हुआ तो कठायत ने उसे रजाई गुरू के अखाड़े में ीड़ा–व्यायाम सीखने के लिए भेज दिया। यहां उसे उसकी बराबरी का साथी मिला जिसका नाम था बठवा। दोनों में बड़ा प्रेम था। एक दूसरे पर प्राण न्यौछावर करने को तत्पर। शारीरिक बल में भी एक दूसरे से बढ़–चढ़कर ।

धीरे–धीरे चंदा सोलह साल की हो गयी। लोरिक भी ऐसा युवक बन कर निखर आया कि पुरूषोचित्त सौन्दर्य का प्रतीक बन गया। चंदा लोरिक के प्रति आकर्षित होती चली गयी। यह आकर्षण शीघ्र ही प्रेम में परिणित हो गया।

चंदा की आयु को देख कर रानी को उसके विवाह की चिन्ता सताने लगी। उसने राजा से कहा–लड़की सयानी हो गयी है। अब उसे विवाह की चिन्ता करो। राजा ने कहा–मेरी कन्या गुणी है। सुन्दर है। बड़े–बड़े राजा अपने राजकुमारों के लिए मेरी बेटी का हाथ मांगने आएंगे। चिन्ता करने की बात क्या है? रानी ने कहा आपने तो कठायत को वचन दिया था। लोरिक योग्य लड़का है। चन्दा भी उससे प्रेम करती है। आप अपना वचन निभाइये और इनका विवाह करवा दीजिए। राजा ने कहा– जिसके घर में भूजी भांग नहीं उसके घर में अपनी कन्या देकर क्या उसका भविष्य नष ट करूं? ऐसा नहीं हो सकता। मेरी बेटी राजकन्या है, किसी राजकुमार से ही उसका ब्याह होगा। राजा के आगे रानी की एक न चली।

कुछ ही दिनों पश्चात रिढ़ना राज्य का राजा गौरागढ़ के राजा के पास अपने पुत्र बावन वीर का चंदा के साथ विवाह का प्रस्ताव लेकर आया। गौरागढ़ के राजा को जैसा घर–घर चाहिए था, वैसा मिल गया। बावन वीर के साथ चंदा का विवाह धूमधाम से सम्पन्न हो गया।

राजा अपना वचन भूल गया, इससे कठायत को आश्चर्य नहीं हुआ। धन और पद के नशे में चूर कौन वचन पालन करने की परवाह करता है? कठायत को अपने पुत्र के गुणों और वीरता पर गर्व था। उसने लोरिक का विवाह गौरी देश की कन्या मांझर से कर दिया। दोनों सुखपूर्वक रहने लगे।

उधर चन्दा ससुराल में बड़े मानसिक कष्ट में समय–व्यतीत कर रही थी। महल में सुख–सुविधा की कोई कमी नहीं थी, दास–दासियां भी थीं किन्तु पति रोगी था। वह छःमाह सोता था और छःमाह जागता था। कुम्भकर्ण का सहोदर ही समझो। लोग समझते थे

कि वह योगी है। जब जाग रहा होता तो दारू के नशे में चूर रहता तात्पर्य यह कि चंदा को वैवाहिक जीवन का कोई सुख पति के घर में प्राप्त नहीं था। उसे अपने मायके के वे दिन याद आते थे, जब वह लोरिक के साथ हंसती–खेलती, उन्मुक्त जीवन बिता रही थी। बावन वीर के उपेक्षापूर्ण व्यवहार ने लोरिक के प्रति उसके प्रेम को और प्रगाढ़ कर दिया। वह इस साने के पिंजरे से मुक्त होने का उपाय सोचने लगी।

एक दिन अवसर पा कर चन्दा अपनी लोकड़हिन मालिन डोकरी को लेकर पति का घर छोड़कर मायके के लिए निकल पड़ी। मार्ग में गहरी नदी पड़ी, जिसे पार करते समय वह डूबने लगी। सौभाग्यवश लोरिक नदी तट पर अपनी भैंस चरा रहा था। उसने उसे डूबने से बचा लिया। आगे जाने पर जंगल पड़ा। वहां एक गुण्डा मिला जो उसके सतीत्व को भ्रष्ट करना चाहता था। संयोग से लोरिक उसी रास्ते से आ रहा था, उसने देख लिया। उसने उस गुण्डे की अच्छी तरह मरम्मत की। गांव नजदीक आने पर लोरिक अपने घर चला गया। चंदा अपने पिता के महल की ओर चली गयी।

मालिन डोकरी के घर लोरिक और चन्दा का मिलन होने लगा। चन्दा अपने पिछले सारे दुःख भूल गयी। किन्तु, इन दोनों के मिलन का समाचार किसी प्रकार लोरिक की पत्नी मांझर को मिल गया। दही बेचने के बहाने वह मालिन डोकरी के घर पहुंची तो देखा कि दोनों एक खाट पर बैठे हसी–ठिठोली करने में मग्न हैं। बस फिर क्या था–झगड़ा मच गया। लोरिक ने अपनी पत्नी मांझर को मार–पीटकर वहां से भगा दिया।

चंदा ने लोरिक से कहा –मांझर को हमारे मिलन की बात मालूम हो चुकी है। वह चुप बैठने वाली नहीं है। गांव भर ढिढोंरा पीटकर हमें बदनाम कर देगी। अच्छा हो, हम यहां से भाग कर कहीं और चले जाएं। कोई दूसरा उपाय भी नहीं था। दोनों भाग निकले।

उधर बावन वीर चंदा की खोज में निकल पड़ा। रास्ते में बावन वीर ने लोरिक और चंदा को देख लिया। उसने निशाना साधकर लोरिक पर तीर छोड़ा । वह बाल–बाल बच गया और एक मंदिर की आड़ में चंदा को लेकर छिप गया। मंदिर पुराना। संयोग से मंदिर उसी समय ढह गया। बावन वीर ने समझा ये दोनों मंदिर के मलबे में दब कर मर गये। वह लौट गया।

चंदा और लोरिक मलबे में दब कर मरे नहीं । बाल–बाल बच गये। वहां से वे दोनों आगे बढ़े। रात हो गयी थी। महादेव के मंदिर में उन्होंने आश्रय लिया। दोनों थके हुए थे। तभी लोरिक को एक सांप ने काट लिया। किन्तु, बैगा–गुनिया के झाड़ फूंक से लोरिक के प्राण बच गये। वहां से ये करिंधा राज गये। वहां वे गुड़ी में विश्राम कर रहे थे कि राजा के नाई ने उन्हें देखा। उसने जाकर राजा को बताया कि एक बटोही के साथ एक अत्यंत सुन्दर स्त्री है। जो आपकी पटरानी बनने योग्य है। राजा ने सिपाहियों को भेजा। लोरिक ने उनकी ही लाठी छीन कर उन्हें मार भगाया। तब राजा ने अपने दो वीरों को भेजा जिनका नाम करनू और बरनू था। लोरिक ने उन्हें भी धूल चटा दी। तब राजा स्वयं आकर उनसे संधि कर ली और कहा कि तुम पाटनगढ़ जा कर रहो। वहां तुम्हारे लिए सब सुविधा की व्यवस्था हो जाएगी।

लोरिक चंदा को लेकर पाटनगढ़ के मार्ग पर चल पड़ा । मार्ग में हरदीगढ़ के पास उसका बाल–सखा वीर बठवा मिल गया। वह उसी की खोज में निकला था। वीर बठवा ने उसे समझाया कि तुम्हें पाटनगढ़ भेजने में करिधा राजा की कोई चाल है। तुम घर चलो। वहां मांझर तुम्हारे बिना सूख कर कांटा हो गयी है। तुम्हारे गाय–गरू तुम्हारे बिना चारा नहीं खाते। अपने बाल–सखा की बात मान लोरिक चंदा को लेकर घर लौट आता है।

उनके घर लौट आने का समाचार मिला तो बावन वीर आंधी की तरह गउरागढ़ आया। उसके साथ उसके लठैत भी थे। चंदा को देख कर उसके बाल पकड़ कर खींचने लगा, तब वहीं लोरिक पहुंचा। घोर युद्ध हुआ। गांव भर शोर मच गया। शोर सुन कर लोरिक का बाल सखा बठवा दौड़ा आया। बठवा को देख कर लोरिक का साहस लौट आया। उन दोनों ने मिल कर बावन वीर और उसके लठैतों की दुर्गत बना डाली। बावन वीर वहीं धराशायी हो गया और उसके लठैत भाग गये।

लोरिक चन्दा और मांझर को लेकर सुखपूर्वक रहने लगा। जैसे लोरिक–चंदा के दिन फिरे, वैसे सब के दिन फिरें।

कहीं–कहीं लोरिक की पहली पत्नी मांझर का नाम मंजरी या मंजरिया मिलता है। कहीं–कहीं लोरिक–चंदा की कथा चंदैनी के नाम से भी प्रसिद्ध है। शाहाबाद और मिर्जापुर के आस–पास भी लोरिक को नायक के रूप में प्रस्तुत करने वाली कथाएं प्रचलित हैं, किन्तु उनके अन्य पात्र वही नहीं है, जो छत्तीसगढ़ की कथा में है। कथानक में भी बहुत भिन्नता हैं। कहीं–कहीं लोरिक पर आधारित कथा लोरिकायन के नाम से भी प्रचलित है। हिन्दी साहित्य कोश में प्रेमाख्यान काव्य शीर्षक के अंतर्गत सूफी साधकों द्वारा रचित रचनाओं का विवरण है। उसमें मुल्ला दाउद का चन्दायन का उल्लेख है। इस प्रेम कथा काव्य की रचना उन्होंने सन् 1370 ई. में की थी। सूफी काव्य परम्परा की यह पहली रचना मानी जाती है। छत्तीसगढ़ में यह प्रेम कथा अन्य क्षेत्रों में बंजारों के माध्यम से फैली होगी, ऐसा अनुमान है।

छत्तीसगढ़ की कलाएँ

छत्तीसगढ़ की गौरवशाली कला परंपरा

छत्तीसगढ़ जिसे इतिहास, पुराणों और महाकाव्यों में कोसल, दक्षिण कोसल अथवा महाकोसल कहा गया है, प्रागैतिहासिक युग से सांस्कृतिक तथा सामाजिक संरचना की दृष्टि से अपना विशिष्ट स्थान रखता है। महान पुरातत्वविद्, इतिहासकार तथा साहित्यकार पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय ने दावा किया है " छत्तीसगढ़ मनुष्य जाति की सभ्यता का जन्म स्थान है। मानव जाति की आदि सभ्यता यहीं पली थी।" अपने कथन के प्रमाण में वे रायगढ़ जिले के सिंघनपुर–कबरा पहाड़ के शैलाश्रयों में आदि मानव द्वारा बनाये गये चित्रों का उल्लेख करते हैं। पुरातत्वविदों ने इन चित्रों को बीस हजार से पचास हजार वर्ष प्राचीन माना है। कर्नल गार्डन भी इन चित्रों को सबसे पुराना कहते हैं। इन चित्रों में त्रिशूल, सप्त मातृका तथा ' हाथा देने ' के चित्र हैं। चावल के आटे में हल्दी घोल कर ' हाथा देने ' की प्रथा आज भी मांगलिक अवसरों पर प्रचलित है। सिंघनपुर के एक चित्र में सात लहराती धारायें जो सप्त मातृका के प्रतीक हैं। मांगलिक अवसरों पर आज भी मातृका को इसी प्रकार चित्रित किया जाता हैं। छत्तीसगढ़ में सप्त मातृका की आराधना "सतबहनियां " के नाम से की जाती है। सिंघनपुर मे त्रिशुल और सप्त मातृका के चित्र इस बात की संभावना व्यक्त करते हैं कि आदिमानव शक्ति आराधना की ओर उन्मुख हो रहा था।

सिंघनपुर के चित्रों में विभिन्न आकार–प्रकार के ज्यामितीय चित्र भी हैं। इनमें से कुछ चित्रों का उपयोग संकेत विशेष के रूप में होता था। श्री अमरनाथ दत्त के अनुसार इन संकेत चिन्हों में लिपि के विकास के बीज निहित हैं। आज भी छत्तीसगढ़ में विभिन्न पर्वों और अनुष्ठानों के अवसर पर विविध प्रकार के चौक पूरने की प्रथा प्रचलित है। इनमें भित्त चित्र भी शामिल हैं। डॉ. हीरालाल शुक्ल के अनुसार " छत्तीसगढ़ की चित्रकला को कबरा पहाड़ और सिंघनपुर की गुफाओं से जोड़ा जा सकता है।" सिंघनपुर – कबरा पहाड़ के चित्रों को चित्रकला यात्रा का प्रस्थान बिन्दु माना जा सकता है। सिंघनपुर तथा कबरा पहाड़ की चित्रकला भले ही प्रारंभिक अवस्था के हों किन्तु आदि मानव ने अपने भावों–विचारों की अभिव्यक्ति के माध्यम से चित्रकला के महत्व को पहचान लिया था। यह पहचान ही मानव सभ्यता और संस्कृति के विकास का प्रथम चरण है। यह समझ और सोच ही समाज को सुसभ्य और सुसंस्कृत बनाती है। अनुभूति, कल्पना और संवेदनशीलता के बिना कला जन्म नहीं लेती । छत्तीसगढ़ की लोक कला परंपरा उतनी ही प्राचीन है जितनी सिंघनपुर–कबरा पहाड़ के शैल चित्र। छत्तीसगढ़ की लोक कला परंपरा का इतिहास यहीं से प्रारम्भ होता है।

कला समीक्षक ब्योहार राममनोहर सिंह ने सिंघनपुरा–कबरा पहाड़ के चित्रों को " कला की अमूल्य सम्पत्ति" कहा है। प्रो. बालचन्द्र जैन के अनुसार " इस युग के प्रागैतिहासिक मानव को कला से प्रेम था।" कला से प्रेम सभ्य और सुसंस्कृत होने का परिचायक है। आदि मानव ने आखेट–दृश्यों के अतिरिक्त पशु–पक्षियों और सरीसृपों का भी चित्रांकन किया है। प्रो. कृष्णदत्त बाजपेयी के अनुसार " कई स्त्री पुरूष एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए नृत्य की मुद्रा में चित्रित दिखायी पड़ते हैं।" श्री सतीश कुमार द्विवेदी के अनुसार ओंगना (रायगढ़) के शैलचित्रों के एक दृश्य में एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए नृत्य करते हुए मानवों का अंकन है। उनमें से एक के हाथ में वाद्यनुमा

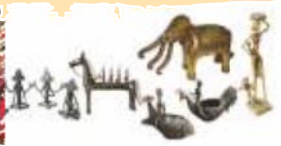

वस्तु है। डॉ.हेमलाल यदु ने भी लिखा है " सिंघनपुर के ऐतिहासिक चित्रों में आमोद–प्रमोद के दृश्यों का अंकन है। वाद्य यंत्रों में ढोलक, बांसुरी आदि मिलते हैं जो उनके संगीत प्रिय होने का परिचय देता है।"

उपर्युक्त के कथन के आधार पर यह प्रमाणित किया जा सकता है कि रायगढ़ जिले की पहाड़ियों में आदि मानव द्वारा अंकित चित्रों में ही छत्तीसगढ़ की लोक–परंपरा का उत्स है। तात्पर्य यह कि छत्तीसगढ़ की लोक कला –परंपरा उतनी ही प्राचीन है जितने इन पहाड़ियों के शैल चित्र ।

छत्तीसगढ़ की लोक नाट्य परम्परा का विकसित रूप सरगुजा के रामगढ़ पर्वत पर स्थित ढाई हजार वर्ष प्राचीन गुफा नाट्य शाला है। रामगढ़ की गुफा नाट्य शाला अभिनय कला ही नहीं, काव्य–कला, संगीत तथा नृत्य कला के प्रदर्शन का भी केन्द्र था। यहीं की एक अन्य गुफा जोगी माड़ा में सुतनुका नाम की देवदासी का भी उल्लेख है जो वरूण देव की सेवा में नियुक्त थी। देवताओं को नृत्य और संगीत से प्रसन्न करने के लिये प्रशिक्षित देव–दासियों की नियुक्ति मंदिरों में की जाती है। यह प्रथा दक्षिण भारत में आज भी कहीं–कहीं मिलती है। बस्तर के नाग नरेश सोमेश्वर देव के गाडियां से प्राप्त शिलालेख में मंदिर में नृत्य करने वालीं नर्तकियों के भरण–पोषण के लिये भूमि प्रदान किये जाने का उल्लेख है।

सरगुजा के रायगढ़ पर्वत की जोगीमाड़ा गुफा में कुछ चित्र भी अंकित हैं। श्रीकृष्ण दास के अनुसार " भारत में अब तक जितने भी भित्त–चित्र मिले हैं, उनमें से ये सबसे पुराने हैं। इन चित्रों में एक दृश्य नृत्य करती हुई बालाओं का है। पास ही वादक बैठे हुए हैं।

मल्लहार की माता- डीडनेश्वरी देवी

मल्हार के डिडनेश्वरी देवी के मंदिर, रतनपुर किले के मंदिर, गंडई, पाली, राजिम, देउरबीजा, भोरमदेव, जाँजगीर के मंदिरों में नृत्य और संगीत के दृश्य उत्कीर्ण हैं। इनमें से कुछ ऐसे भी दृश्य हैं जिन पर लोक जीवन और लोक परम्परा की छाप स्पष्ट हैं। इन पुरातात्विक प्रमाणों के अतिरिक्त वाल्मीकि रामायण में रामकथा के लोक गायन परम्परा का उल्लेख मिलता है। आदि कवि महर्षि वाल्मीकि का आश्रम तुरतुरिया में था। महारानी सीता ने कुश तथा लव को इसी आश्रम में जन्म दिया था। महर्षि वाल्मीकि ने कुश तथा लव को शास्त्र–शस्त्र के साथ–साथ सुंगीत का प्रशिक्षण की दिया था। श्रीराम के अश्वमेघ यज्ञ में वाल्मीकि, कुश तथा लव भी गये थे। वाल्मीकि ने कुश तथा लव को रामकथा गाने को कहा। उन्होंने पहले मार्ग–विधि से रामकथा का गायन किया। उसके बाद श्रीराम ने उनसे देशी रीति अर्थात् लोक शैली में रामकथा सुनाने को कहा। तात्पर्य यह कि त्रेतायुग में भी छत्तीसगढ़ में कथा गायन की लोक शैली प्रचलित थी। निश्चय ही, यह लोक शैली लोक भाषा में ही विकसित हुई होगी। वाल्मीकि रामायण के इस प्रसंग से छत्तीसगढ़ के लोक संगीत की परम्परा को हम रामायण काल से मान सकते हैं। कथा गायन की लोक शैली आज भी छत्तीसगढ़ में यथावत प्रचलित है। उदाहरण के लिये पण्डवानी, भरथरी, ढोला–मारू, आल्हा, लोरिक–चंदा, गोपी चंदा, गोपल्ला या गोपाल राय का पवारा, रायसिंघ का पवारा, नगेसर कइना, फूल कुंवर आदि। इनमें से कुछ गाथाएं बांस के साथ गायी जाती है। बांए एक ऐसा अनोखा वाद्य है, जो देश में अन्यत्र कहीं नहीं पाया और बनाया जाता। बांसुरी इसी बांस का लघु संस्करण है।

छत्तीसगढ़ के लोक नृत्यों तथा लोक गीतों में जितनी विविधता है, उतनी विविधता देश में अन्यत्र किसी भी क्षेत्र में नहीं है। गीत मूलतः लोकविद्या है। साहित्य में वह बाद में आया। गीत अपने आकार में छोटे और गेय होते हैं। भाव–प्रवणता गीतों का प्राण तत्व है। छत्तीसगढ़ी लोक भाषा में गीतों की अविछिन्न परम्परा है। छत्तीसगढ़ी में लोक गीत का प्राचीनतम उदाहरण जो प्राप्त होता है, वह दसवीं–ग्यारहवीं शताब्दी का है। इतिहासकार बाबू रेवाराम ने लिखा है कि रतनपुर के हैहयवंशी सम्राट जाजल्लदेव (प्रथम) महान योगी और दार्शनिक गुरू गोरखनाथ के शिष्य थे। अपने अंतिम अवस्था में राजपाट अपने पुत्र को सौंप कर जाजल्लदेव ने सन्यास ले लिया और गुरू गोरखनाथ के साथ चले गये। उज्जैन के नरेश भर्तृहरि और गौड़ प्रदेश के गोपीचंद भी गोरखनाथ के ही शिष्य परम्परा में थे।

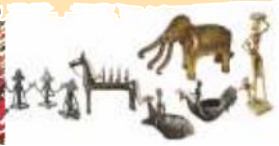

गोरखनाथ का एक भजन उलटवासी शैली में आज भी छत्तीसगढ़ी में गाया जाता है। छत्तीसगढ़ी में पाये जाने वाले गोरखनाथ के भजन छत्तीसगढ़ी भाषा को एक हजार वर्ष प्राचीन सिद्ध करते हैं।

छत्तीसगढ़ के प्रमुख और लोकप्रिय गीतों–सुवा, ददरिया, करमा, डण्डा, फाग, पंथी, भोजली आदि है। सुवा, करमा, डण्डा, पंथी गीत नृत्य के साथ गाये जाते हैं। राउत नाच में बीच–बीच में ''दोहा पारने'' की प्रथा है। देवार भी गीत के साथ नृत्य करते हैं। छत्तीसगढ़ में देवरनिन महिलायें नृत्य और गायन कला में विशेष निपुण होती हैं। श्री रामचन्द्र देशमुख ने "देवार डेरा'' लोकमंच के माध्यम से उनकी कला को सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिष्ठा प्रदान करने में प्रमुख भूमिका निभायी थी। बसदेवा गीत के रूप में '' जय गंगान '' शैली ने कवियों का ध्यान आकर्षित किया है। पद्मश्री मुकुटधर पाण्डेय ने ''जोगी '' सम्प्रदाय के लोगों द्वारा गोरखनाथ, कबीर, धर्मदास आदि संतों के निर्गुणधारा के भजन गाने का उल्लेख किया है।

धार्मिक गीतों की श्रृंखला भी बड़ी लम्बी है। देवी–देवताओं के विवाह प्रसंग के गीतों में शिव, राम तथा कृष्ण के विवाह संबंधी गीत विशेष लोकप्रिय है। भक्ति गीतों में सैकड़ों प्रकार के भजन गाये जाते हैं। देवी के जस गीत तथा शीतला माता के सेवा–गीत गाने वाली भजन मण्डलियां प्रत्येक गांव में मिल जायेगी। इनके अतिरिक्त जगन्नथिया गीत भी प्रचलित है।

करमा नृत्य–गीत रायगढ़ से बस्तर तक डोंगरगढ़ ने सराईपाली तक विविध रूपों में पाये जाते हैं। महारानी दुर्गावती के पूर्व मण्डला क्षेत्र छत्तीसगढ़ में सम्मिलित था। वहाँ के वनवासी आज भी करमा गीत छत्तीसगढ़ में गाते हैं। श्री शेख गुलाब के अनुसार करमा उत्सव तीन अवसरों पर मनाया जाता है :–

(1) करमा तीजा – तीज त्यौहार कुंवार मास में केवल कुंवारी कन्याओं द्वारा (2) करमा एकादशी – कुंवार एकादशी को लड़के–लड़कियां मिलकर मनाते हैं। (3) करमा जितिया – कुंवार एकादशी से बारह दिनों तक समाज के सभी वर्ग के लोग मिल कर मनाते हैं।

बालिकाओं में फुगड़ी नृत्य तथा अन्य खेलों के साथ लोक गीत गाने की प्रथा है। गाथा सप्तशती में फुगड़ी बाल नृत्य का उल्लेख है। गाथा सप्तशती दो हजार वर्ष प्राचीन ग्रंथ है। उसमें उल्लिखित फुगड़ी नृत्य छत्तीसगढ़ में आज भी प्रचलित है।

मांदर छत्तीसगढ़ का लोकप्रिय वाद्य है। मांदर का निर्माण मिट्टी से होता है। कर्मा और पंथी नृत्य में मांदर की भूमिका प्रमुख है। नगाड़ा का निर्माण भी मिट्टी से होता है। मोहरी, चिकारा और सींग बाजा भी इस क्षेत्र के प्रमुख वाद्य है।

छत्तीसगढ़ में लोक नाट्य "नाचा'' के नाम से प्रसिद्ध है। नाचा के लिये मंच की आवश्यकता नहीं होती। किसी भी खुले स्थान में आकाश के नीचे "नाचा" का आयोजन हो सकता है। प्रकाश के लिये पहले मशाल का उपयोग किया जाता था। रामचन्द्र देशमुख के अनुसार "साजिन्दे (वादक) और कलाकार बहुत कम होते थे। एक चिकारावाला, एक तबलावाला, एक मंजीरा वाला। कमर में तबला बांध कर खड़े हो जाते थे। छत्तीसगढी गीत गाते, रात भर नाचते थे। गला खोलकर गाते थे, माइक नहीं होते थे।" पात्रों की वेशभूषा और साज–सज्जा भी साधारण ही होती है। नाचा के मंचन के लिये पात्रों को पाण्डुलिपि की आवश्यकता नहीं होती, न उन्हें लिखित संवादों की आवश्यकता होती । विषय–वस्तु समझ लेने के पश्चात पात्र संवादों की सृष्टि स्वयं कर लेते हैं। इतना ही नहीं वे संवादों को इतना

नराकास संस्थान भिलाई इस्पात संयंत्र द्वारा आयोजित राजभाषा माह – 2018 की झलकियां

नराकास की 47वीं छः माही बैठक की झलकियां

नराकास की 47वीं छः माही बैठक की झलकियां

नराकास के संस्थानों द्वारा आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों की झलकियाँ

सम्प्रेषणीय और प्रभावशाली बना देते हैं कि दर्शकों के मन को घण्टों बांधे रखते हैं। नाचा को मनोरंजक बनाने के लिये बीच–बीच में प्रहसन प्रसंगों को इस प्रकार गूंथ देते हैं कि जैसे वे मूल कथा वस्तु के ही अंग हो। इसके लिये परी और जोकड़ के पात्रों का सृजन किया जाता है। ''नाचा'' में इन प्रहसन प्रसंगों को ''गम्मत'' कहते हैं। गम्मत के बहाने सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक आडम्बरों पर हास्य से लिपटा हुआ करारा व्यंग्य प्रहार किया जाता है। बीच–बीच परी द्वारा नाच और गीत के लिये अवसर भी निकाल लिये जाते हैं। नचकहरिन सिर पर लोटा रखकर नृत्य इस कुशलता से करती है कि लोटा सिर से गिरता नहीं। अपनी नाट्य प्रतिभा के बल पर मदन, बुलवा, ठाकुर राम, किस्मत बाई आदि ने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कला प्रदर्शन कर यश अर्जित किया है।

डॉ. हीरालाल शुक्ल ने लोक संस्कृति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है'' लोक संस्कृति में ही राष्ट्रीय संस्कृति पारिभाषित होती है।'' छत्तीसगढ़ के लोक कलाकारों को इस सूत्र वाक्य को हृदयंगम करना है।

नवा राज के फायदा – लक्ष्मण मस्तुरिया

नवा राज बन के बेरा मे,
भारी गदगदाए रहे महराज
अब कइसे मुंह चोराए कस
रंगत हस–सुखरा के ताना
मंथिर महराज के करेजा ल
कतरे कस लागथे
सुखरा के का, गोठियाथे,
तहां नंगत बेर ले कुकरा कस
कुड़कुड़ाथे, थपौड़ी मारके पछताथे
नवा राज, नवा सरकार, गांव के तरक्की
बेरोजगार लइका मन ठिकाना लगही
कहिके सेठ ल गांव भर के वोट ल
देवा देहे अच्छा भठा देहे महराज!
नवा राज के फ़ायदा दिख हे
अब गांव के गांव दारू पीयत हें
बनवासी मनके विधायक सेठ
बाढ़ते जात हे वोकर पेट
वोकर लठिंगरा मन दारू के दुकान,
चलाथे, राइस मिल, रोलिंग
कारखाना खुलत हे
लगथे सेठ सौ बछर बर फूलत हे
नवा राज के इही फायदा हर
परगट दिखत हे
हमन ल तो महराज
ए महंगाई हर निछत हे।

नवा राज के सपना, आंखी म आगे
गांव–गांव के जमीन बेचाथे
कहां–कहां के मनखे आके
उद्योग कारखाना अउ जंगल लगाथें
हमर गांव के मनखे पता नही कहां, चिरई कस
उड़िया जाथें, कतको रायपुर राजधानी म
रिकसा जोंतत हें किसान मजदूर बनिहार होगे
गांव के गौटिया नंदागे,
नवा कारखाना वाले, जमींदार आगे।

छत्तीसगढ़ - बस्तर की घड़वा कला

छत्तीसगढ़ के विभिन्न अंचलों में धातुशिल्प निर्माण की सुदीर्घ परम्परा है । प्रदेश के आदिवासी कलाकार पारम्परिक रूप से धातु की ढलाई कर आकर्षक कृतियों का निर्माण कर रहें हैं। ये आदिवासी कलाकार सदियों से सौन्दर्यपरक, आनुष्ठानिक और उपयोगी कलाकृतियों का निर्माण अंचल के लोगों की आवश्यकता और सौन्दर्य चेतना के अनुसार सहज रूप से बनाते आ रहें है। जिनमें सरगुजा के मलार, रायगढ़ के झारा, बस्तर के घड़वा और लोहार प्रमुख है। मध्य प्रदेश में भी धातु ढलाई का अनुपम कार्य हो रहा है जिनमें टीकमगढ़ के स्वर्णकार और बैतूल के भरेवा कलाकारों ने आज तक अपनी परम्परा को जीवित रखा है। इस परम्परागत कला में, इतिहास एवं संस्कृति के अनेक उतार चढ़ाव कांस्य युग से वर्तमान युग तक की लम्बी परम्परा में सुरक्षित है । साढ़े चार पांच हजार वर्षों की यह समृद्ध कला परम्परा आज तक सुरक्षित व थोड़े परिवर्तनों के बावजूद अक्षुण्ण चली आ रही है। आदिवासी समाज ने इस कला परम्परा में किसी प्रकार का हस्तक्षेप किया बिना इसे धरोहर के रूप में न सिर्फ सुरक्षित रखा वरन इसे जीवन्त भी बनाये रखा

छत्तीसगढ़ के दक्षिण में बसे बस्तर क्षेत्र में आज घढ़वा कला बड़े पैमाने पर होने लगा है। बस्तर जिले में प्राचीन काल से मिश्र धातु की ढलाई करके मूर्तियां, आभूषण, बर्तन, व दैनंदिन उपयोग में आने वाली अनेक वस्तुएं बनाई जाती रहीं है। यह मिश्र धातु तांबा,

जस्ता व रांगा के मिश्रण से तैयार की जाती है। मिश्र धातु से ढलाई करके मूर्तियां बनाने का यह कार्य घसिया जाति के लोग करते है, जो दस्तकारों की एक अत्यंत प्राचीन जाति है। जो आज स्वयं को घड़वा जाति का होना बताती है ।

धातुशिल्प निर्माण की तकनीक चाहे वह सरगुजा की हो टीकमगढ़ की हो या बस्तर की घड़वा कला हो, ढलाई की मूलप्रक्रिया एक जैसी ही है, थोड़ी बहुत यदि भिन्नता है वह स्थान, परिवेश और सामाग्री की उपलब्धता के कारण हैं। शिल्प निर्माण में काम में आने वाले औजारों में भी समानता है। यह तकनीक भारत वर्ष की अत्यंत प्राचीन तकनीक है। जिसके साक्ष्य मोहन जोदड़ो से प्राप्त कांस्य प्रतिमा है। धातु ढलाई की इस तकनीक को मोम क्षय विधि कहते है। फ्रेंच भाषा में इसे सायरे परड्यू कहा जाता है। तथा अंग्रेजी में वेक्स लॉस प्रोसेस कहा जाता है। इस विधि में मधुमक्खी द्वारा निर्मित मोम का प्रयोग किया जाता है। इसलिये इस तकनीक का नाम मोम क्षय विधि पड़ गया ।

इन लोक धातु शिल्पियों द्वारा निर्मित शिल्प पारम्परिक, लोक आधारित, सहज सरल, आकारों में होती है। लेकिन इन शिल्पियों द्वारा निर्मित ये सरल किन्तु आकर्षक कृतियां आज के आधुनिक परिवेश में न केवल कला प्रेमियों बल्कि अभिजात्य वर्ग और मध्यम वर्गीय परिवारों की भी पहली पसंद बन रही है। अब यह सुखद किन्तु विचारणीय प्रश्न है कि ऐसे कौन से तत्व है, जो इन शिल्पों को सामान्य से अलग करते हैं और समकालीन मंच पर अपना स्वतंत्र स्थान पाते है। जो भी हो बुद्धिजीवियों और कलाप्रेमी

की यही जिज्ञासा इन लोक शिल्पों के संसार को क्रमशः बढ़ाते जा रहे हैं। जिससे इन लोक शिल्पियों के लिए सुखद और प्रगतिशील मार्ग का निर्माण प्रारंभ हो गया हैं । जहां इन प्रतिभाशाली शिल्पियां को अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय देने के लिये मंच प्राप्त हो रहा है।

यहां की सांस्कृतिक संपदा और पुरातात्विक अवशेषों से प्राप्त होने वाली सामग्री के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ईसा पूर्व से ही यहां वास्तुकला, मूर्तिकला, और धातुकला का विकास हो चुका था । इस अंचल की शिल्प कला को देखकर ऐसा अनुभव होता है कि ये शिल्प कला छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक वैभव की मौन भाषा है । आदिवासी संस्कृति के इन शिल्पों में दो प्रकार के शिल्पों का निर्माण होता है। प्रथम पराशक्ति की आराधना हेतु देवी देवताओं के शिल्प जिनमें मुख्यतः घोड़ों पर सवार देवियां है, या जो हाथों में खड्ग, ढाल, अन्न की बालियां व मयूर पंख धारण किये हुए है जैसे तेलगिन माता मूर्ति, कंकालिन माता इत्यादि, चित्र क्रमांक ३, और दूसरा पशु आकृतियां जिनमें हाथी, घोड़े की आकृति प्रमुख है , इसके अतिरिक्त शेर मछली कछुआ मोर इत्यादि बनाए जाते है। इसके अतिरिक्त आनुष्ठानिक पात्रों, शिल्पों का निर्माण भी किया जाता है। वर्तमान में गृहसज्जा हेतु विभिन्न रूपाकारों का निर्माण इन शिल्पियों की स्वयं की रचनात्मक पहल है। वैसे भी आंचलिक देवी देवताओं का स्वरूप स्थानीय आस्थाओं और मिथक कथाओं पर उभरा हुआ स्वरूप है। जिसमें शिल्पियों की रचनात्मकता के ही उदाहरण मिलते है । ये आकृतियां न्यूनाधिक बेडौल भी होतीं हैं। किन्तु प्रतीकात्मक अधिक होती है। इन पर लक्षणवादी लोक संस्कृति का प्रभाव पड़ा है। इन देव आकृतियों को पूज्य भाव से बनाया जाता है। सामान्यतः जिस क्षेत्र के जैसे रीति रिवाज अथवा परम्पराएं होती है कला और शिल्प भी उसी के अनुरूप ढलने लगते हैं क्योंकि तीज त्योहार, रीति रिवाज, जादू टोना, मनोरंजन, प्रेम भावना, कला के रूप निर्धारण और प्रयोगों के प्रति उत्तरदायी होते है। यदि संस्कृति नगरीय होगी तो उसमें सामाजिक रूचि अरूचि प्रयोगात्मकता और व्यावसायिकता अधिक हावी रहेगी। प्रयोगों के कारण कलारूपों में स्थायित्व कम होगा। ग्रामीण अंचलों से जुड़ी इस क्षेत्र की कला आस्था और परम्परा पर आश्रित है अतः प्रयोगों की प्रक्रिया धीमी एवं दीर्घकालिक हैं। आवश्यकता के अनुरूप धीरे धीरे उसका स्वरूप निश्चित होता है। इन रूपों में स्थायित्व अधिक है। ३

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि जादू टोना ने यहां की कला को प्रभावित किया है। शक्ति स्थलों पर लोहे की छड़ , त्रिशूल, अथवा धातु की मूर्तियों को स्थापित किया जाता है। लौह एवं ढलाई से निर्मित कृतियों का निर्माण का प्रचलन यहां दीर्घकाल से हो रहा है। लुहार, घसिया, घड़वा, तमेर आदि शिल्पियों ने विभिन्न देवी देवताओं पक्षियों, एवं बाइसन हार्नयुक्त मुरिया मारिया जाति के लोगों

को शिल्पों में ढाला और आकर्षक कृतियों में प्रस्तुत किया। नवीन प्रयोगों और विकसित स्वरूपों में छत्तीसगढ़ क्षेत्र का ढोकरा शिल्प एक उद्योग का रूप लेता जा रहा है। ढलाई की सीमा के बावजूद टुकड़ों टुकड़ों में बनाकर वृहदाकार शिल्पों के निर्माण में वे सफल रहें है। अनेक शिल्पी मिलकर एक शिल्प के निर्माण में सहयोग करते है। कोण्डागांव जगदलपुर, करनपुर, ऐराकोट आदि गांव इस कला के केन्द्र बनते जा रहें है। अब ये शिल्प नये प्रतीकों और स्वरूपों के आयाम की ओर अग्रसर है।

प्रारंभ में शिल्प निर्माण का कार्य स्थानीय लोगों की आवश्यकता के अनुरूप किया जाता था । किन्तु अब यह कार्य एक व्यवसाय का रूप ले लिया है। बस्तर में अब लगभग ३००से ४०० परिवार इस कार्य में लगे हुए है। ये परिवार परंपरागत तकनीक एवं अलंकरणों में शिल्प व अन्य उपकरणों का निर्माण करते हैं। जिनकी मांग कला संग्रहकर्ताओं में एवं विदेशों में बहुत अधिक है। बस्तर से मध्य प्रदेश हस्त कला निगम प्रतिवर्ष लगभग चार लाख की धातु शिल्पों का क्रय कर बाहर भेजती है। लगभग एक से डेढ़ लाख रूपये मूल्य की मूर्तियां डान्सिंग कैक्टस व श्री जयदेव बघेल व उनकी सहकारी संस्था एवं कुछ अन्य छोटे मोटे इम्पोरियम द्वारा क्रय की जाती है।

आज का यह लोक शिल्पी अनपढ़ अथवा आर्थिक रूप से पिछड़े भले ही हों किन्तु मौलिक सृजन की कसौटी पर अपना स्थान बना चुके हैं। अब क्षेत्रीय गतिविधियों से बाहर निकलकर समकालीन मूर्तिकारों के समकक्ष अपना स्थान बनाने में भी सफल हो रहे हैं वह अब प्रांतीय स्तर पर ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रदर्शनियों में अपनी शिरकत कर अपनी पहचान बना रहा है। जयदेव बघेल, सुकूराम बघेल, सुखचंद घड़वा, मानिक, संग्राम सिंह, हलाल, नान्हेराम जैसे अनुभवी एवं दक्ष शिल्पी प्रथम पंक्ति में आते हैं। जिन्हें बस्तर से बाहर विदेशों में भी प्रदर्शन के लिए आमंत्रित किये जा रहे है। जिनमें जयदेव बघेल नींव के पत्थर रूप में जाने जाते हैं। जिन्होंने जापान, चीन, बिट्रेन, फ्रांस इत्यादि अनेक देशों में ढ़ोकरा ढलाई तकनीक का प्रदर्शन कर इतिहास बनाया है।६ जयदेव बघेल के शिल्पों में आकार अपने नये आयाम में है। हालांकि अलंकरणों में परिवर्तन नहीं किया जाता है, मुख्य आकृतियों में बाजार या शिल्प प्रेमियों के अनुरूप परिवर्तन अपनी रचनात्मक सृजन का परिचय देते हुए किया गया है।

घड़वा शिल्पी जैसे जैसे समकालीन शिल्पियों के साथ प्रदर्शनियों में भाग लेने लगे है, वैसे वैसे अपने इन परम्परागत शिल्प कला शैली में नये नये प्रयोग करने लगे है। कला से संबंधित प्रबुद्ध वर्ग इन्हें नये नये प्रयोग करने को प्रेरित एवं उत्साहित भी करते है। क्यों न हो परिवर्तन और नित नूतनता समय की मांग और अभिव्यक्ति की आवश्यकता है । फिर भी घड़वा शिल्पी अपनी परम्परा अपनी संस्कृति को इन शिल्पों में अक्षुण्ण बनाए रखे है। क्योंकि ये शिल्प घड़वा लोक कला के प्रतिरूप व प्रतीकात्मक रूप है। यह कला अपने सीमित साधनों ,अभावों अत्यंत श्रम साध्य होने के बावजूद सतत गतिशील बनी हुई है। इसका मूल कारण लोक जीवन के धार्मिक विश्वास, जादू टोना, सामाजिक व आर्थिक आधार है। आज लोक कलाओं में प्रयुक्त प्रतीक एक लम्बी सांस्कृतिक प्रक्रिया द्वारा प्रदत्त है। धार्मिक विश्वास, अदृश्य शक्ति के प्रति अटूट आस्था, परस्पर संबंधों के प्रति गहन जिज्ञासा इत्यादि विश्वासों की पृष्ठभूमि में अनेक प्रतीक विकसित हुए है। जिनकी लोक जीवन में गहरी जड़ें हैं। आज इन शिल्पों में जो ज्यामितीय अलंकरण या पशु पक्षी वृक्षों के सरल सहज आकार हमें प्रतीकों के रूप में प्राप्त होते हैं। वे वास्तव में उतने सरल नहीं है। ये अत्यंत परिष्कृत एवं सूक्ष्म आकारों का कलात्मक अमूर्तन हैं।

अपने सतत प्रयास से आज ये शिल्पी श्रेष्ठतम एवं उत्कृष्ट कलाकृतियों का निर्माण कर रहें हैं, और समकालीन जगत में अपने ही प्रयासों से उच्चतम शिखर की ओर अग्रसर हो रहें है

छत्तीसगढ़ - बस्तर का प्रसिद्ध तुम्बा शिल्प

छत्तीसगढ़ में बस्तर की जनजातियों के द्वारा लौकी पर गर्म लोहे के चाकू से किये गये पारंपरिक चित्रांकन को तुम्बा शिल्प कहते है।

तुम्बा शिल्प का इतिहास

भारत में कृषि के बाद सबसे ज्यादा आय कला जगत से प्राप्त होती है। भारत में लगभग 86 लाख गांव है, जिसके हर गांव में कोई–ना–कोई शिल्प प्रचलित है, इनमे से तुम्बा शिल्प छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर जिले के कई गांवो में आदिवासी लोगों द्वारा बनाया जाता है, जो उनकी आम जिन्दगी में अहम भूमिका निभाती है। बस्तर की वनवासी संस्कृति में तुम्बा उनकी जीवन यात्रा का हमसफर है। ऐसा माना जाता है कि तुम्बा (लौकी) जो एक प्रकार की सब्जी या फल होता है, का जन्म अर्फिका में हुआ था। पहले लौकी का इस्तेमाल खाने से ज्यादा बर्तन के रूप में किया जाता था। यह लबें आकार के साथ ही कद्दू की तरह गोल आकार का भी होता है। बडी साइज़ की लौकी को पेड़ पर लगभग एक साल तक पकने अथवा सुखाने के लिए छोड दिया जाता है, इस दौरान लौकी को छेडा नही जाता, अतः बाद मै उसे तोडकर उसकी धुमिल उपरी परत को लोहे के चाकु की सहायता से छील दिया जाता है और अन्दर की मुलायम सामग्री को मुडे हुए चाकु की सहायता से बाहर निकाल दिया जाता है, क्योंकि यह बहुत पतली होती है जो हटाने की प्रक्रिया के दौरान नष्ट हो सकती है। इसके बाद इसे धुप मै सुखने के लिए रख दिया जाता है, सुखने पर विभिन्न प्रकार की पारम्परिक आकृत्तियां ओर पैटर्न लौकी की सतह पर गर्म लौहे के चाकू की सहायता से तैयार किये जाते है। ये लोग कभी भी लौकी के प्राकृतिक आकार को नही बदलते है बलकि ये लोग लौकी पर गर्म लोहे के चाकू से पारंपरिक चित्रांकन कर उसे एक अदभुत कलाकृति मे बदल देते है। लौकी की सतह पर डिजाइन का काम पूरा हो जाने के बाद लौकी को नरम साबून एवं पानी से धो कर धूप मे सूखा दिया जाता है, सूखने के बाद वेक्स पॉलिश की जाती है जिससे कलाकृति चमक उठती है।

उत्पाद

बर्तन : तुम्बा (लौकी) का प्रयोग पहले बर्तन बनाने में किया जाता था। आज भी भारत देश के कई राज्यों मै तुम्बा से बने बर्तनों का उपयोग किया जाता है, गोल आकार के तुम्बा (लौकी) का प्रयोग आंरभ मे पानी रखने के लिये किया जाता था।

वाद्य–यंत्रः वाद्य यंत्र एक प्रकार का वातीवादी यंत्र है, जो आदिवासी लोगों द्वारा तुम्बा (लौकी) पर बनाया जाता है। इसका उपयोग धार्मिक स्थलो एवं कार्यों में किया जाता है। पंश्चिम बंगाल में बाउल लोक गायक द्वारा तुम्बा (लौकी) से बनी डुगडूगी का प्रयोग बाउल लोक गायकी में किया जाता है।

छत्तीसगढ़ के लोक गीत

भोजली गीत

श्रावण शुक्ल नवमीं के दिन से छत्तीसगढ़ के नारी समाज में भोजली का उत्सव मनाना प्रारंभ हो जाता है। एक निश्चित स्थल पर भोजली स्थापित की जाती है, जहाँ सब सखी–सहेलियाँ एकत्रित होती हैं। मिट्टी से भरी टोकनियों में जँवारा बोई जाती है। धान या गेहूँ के बीज बोकर नित्य–प्रति उनके बिरवों की सेवा की जाती है, हल्दी पानी छिड़का जाता है। भोजली पर्व श्रावण पूर्णिमा तक चलता है भोजली गीतों में भोजली की आरती, स्वागत, जागरण और सिराने के गीत प्रमुख हैं। इन गीतों में भोजली की स्तुति की गई है। इनमें छत्तीसगढ़ के लोक जीवन के पारिवारिक और सामाजिक रूपों के चित्र उकेरे गये हैं–

अहो .....देवी .... गंगा

कहाँ के खातू माटी, कहाँ के चंघोरिया

कहाँ के पीली बाई भोजली जगोइया

सूआ गीत

कार्तिक माह के कृष्णपक्ष से प्रारंभ होते इस गीत–नृत्य में छत्तीसगढ़ी नारी और कन्याएँ अपने जूड़े में धान की बालियाँ खोंसकर एक टोकरे में मिट्टी की बनी सूवा की एक या दो प्रतिमा रखकर घर–घर में जाकर, वृत्ताकार होकर, झुक–झुक कर नृत्य करती है।' श्री मुकुटधर पांडेय ने छत्तीसगढ़ का गरबा नृत्य कहा है'। टोकरी में एक प्रतिमा जिसे संदेशवाहक का प्रतीक माना जाता है, जहाँ दो प्रतिमाएँ रखने का रिवाज है, वहाँ उन्हें क्रमशः महादेव और पार्वती का प्रतीक माना जाता है। इसमें नारी की आत्मा बोलती है यह वियोग रस प्रधान गीत है तथापि इसमें करूणा, श्रृंगार, हास्य और भक्ति के पुट भी देखे जा सकते हैं।

पँइया परत हों मैं चन्दा सुरूज के मोला तिरिया जनम झनि दे .... मोला तिरिया जनम झनि दे ... सेवा रे

गौरा गीत

गौरा भी मुख्यतया नारी पर्व है जो दीपावली के बाद धूमधाम से मनाया जाता है। गौरा के अवसर पर महादेव और पार्वती की प्रतिमाएँ स्थापित की जाती है और उन्हीं का पूजन किया जाता है। गीत गाते–गाते नारियाँ इतनी भाव–विभोर हो जाती हैं कि उन पर देवता चढ़ जाता है, जिसे ' देवचघी या देवता बहठई' के नाम से जाना जाता है। शिव–पार्वती की प्रतिमाओं को अक्षत अर्पित करती हुई नारियाँ गौरागीत गाती हैं–

एक पतरी रैनी झेनी, राय रतन दुर्गा देवी

तोरे शीतल छाँव माय, तोरे शीतल छाँव माय

जागो गौरी जागो गौरा ।

करमा गीत

पुरूष वर्ग के प्रमुख नृत्य गीत के नाम से अभिहित करमा नृत्य के संबंध में अनेक दंतकथाएं प्रचलित हैं। एक विशिष्ट किंवदंती के अनुसार 'कर्मसेन' नामक राजा को विपत्ति पड़ने पर करमा नृत्य का प्रचलन हो गया। करमा भादों शुक्ल पक्ष एकादशी को मनाया जाता है। 'कर्मसेमी' वृक्ष की शाखा की देवता के रूप में स्थापना की जाती है और उसी का पूजन किया जाता है। नृत्य के साथ उच्च स्वर में गीत गाए जाते हैं। गीत को मृदंग की संगति दी जाती है।

करमसेमी के आवती, जानी सुनी पार्वती

अहो राम घासी घर, लिहे अवतार

ओ चौक चंदन पिढ़ली मढ़ाये

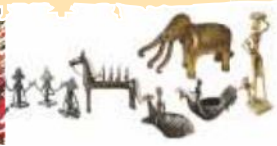

मँडई गीत

इस उत्सव को परंपरा वैदिक काल से चली आ रही है। कार्तिक शुक्ल पक्ष एकादशी के दिन रावत अपने देवी–देवताओं की पूजा कर अपना मँडई अपने यजमानों के यहाँ जा–जाकर गाजे बाजे के साथ करते हैं। नृत्य के मध्य अवकाश देकर दोहे के रूप में गीत गाये जाते हैं। प्राचीनकाल से यह इंद्रध्वज के नाम से प्रख्यात था। बाँस विनिर्मित, मयूर पंख और कौड़ियों से जड़ित यह मँडई स्तम्भ के समान होता है जिसे हिलाते डुलाते रावत नाचते हैं।

गौरी के गनपित भये, अंजनी के हनुमान रे।

कालिका के भैरव भये, कौसिल्या के लछमन राम रे।।

होली गीत

फागुन पुर्णिमा के दिन होली का त्यौहार धूम–धाम से मनाया जाता है। बसंत पंचमी के दिन होली का त्यौहार धूम–धाम से मनाया जाता है। बसंत पंचमी के दिन एरंड का वृक्ष बैगा के द्वारा गड़ाया जाता है और लड़के उसी के पास लकड़ियाँ इकट्ठा करना शुरू कर देते हैं। प्रत्येक रात्रि को वहाँ नगाड़े बजाकर गीत गाते है, जो फागगीत के नाम से जाने जाते हैं जिस रात होली जलाई जाती है, उसी रात को गाँव के युवक, बालक, वृद्ध उस स्थल पर एकत्रित होते हैं। दूसरे दिन रंग और गुलाल खेला जाता है। होली उल्लासमय वातावरण के मध्य फाग गीत का गान किया जाता है।

राधे बिन होली न होय, सहर में दे दे बुलौवा राधे को।

डंडा गीत

कार्तिक शुक्ल एकादशी से लेकर फाल्गुन तक डंडा नाच का समय है। छत्तीसगढ़ी के पुरूष नृत्यगीतों में डंडागीत प्रमुख हैं। यह एक रास गीत है। गाँव में नवयुवक, चंदन, तिलक, फूलमाला और वस्त्राभूषण से सजधज कर निकलते हैं। हाथ में डंडा या छोटी लकड़ी होती है। वे वृत्ताकार घूम–घूमकर नाचते हैं। डंडा गीतों में राधाकृष्ण की प्रेम लीलाओं प्रसंगों के साथ राम लक्ष्मण से संबंधित कथाओं का उद्धरण भी देखा जा सकता है। डंडा–नृत्य गीत का आरंभ देवी देवताओं की वंदना और गीत का अंत आशीर्वाद की निम्नलिखित पंक्तियों से होता है–

का हरदी के बगबग ला का, परदेसी के संग रे भाई

बेटवन बेटवन घर भर तोर भरे, डेहरी लिखे परदेस रे भाई

लोहा के सांकर ला घुना तो खाये, मनखे के कोने बिसवास रे भाई

जँवारा गीत

चैत्र माह में पुरूषों के प्रधान पर्व के रूप में जँवारा पर्व मनाया जाता है जिसमें देवी की पूजार्चन बाद रात्रि को गीत गाने की प्रथा है। इन गीतों में देवी की प्रार्थना, स्तुति, पराक्रम तथा शोभा यथोगान होता है। इन गीतों में देवी को अनेक प्रचलित नामों के अतिरिक्त अन्य आंचलिक नामो से संबोधित किया जाता है: महामाई, भवानी, शीतला, जागतारन और माय। ये छत्तीसगढ़ की प्रमुख आराध्य देवियाँ हैं।

माता फूल गजरा गूँथव हो मालिक के देहरी

हो फूल गजरा काहेन फूल के हार

काहने फूल के तोर माथ मकुटिया

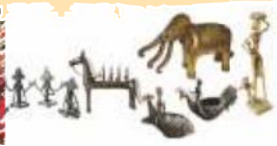

छत्तीसगढ़ के साहित्यकार

बसंत तिवारी

बसंत तिवारी छत्तीसगढ़ के जाने–माने पत्रकार थे व पत्रकारिता में स्वतंत्र लेखन के लिए प्रसिद्ध थे । आपका जन्म 18 जनवरी 1933 को नागपुर में हुआ था । आपने हिंदी विशारद् में अपनी शिक्षा प्राप्त की ।

बसंत तिवारी ने 1951–52 में दैनिक जय हिंद जबलपुर से पत्रकारिता प्रारंभ की । 1952–53 में महाकौशल रायपुर, 1965 से 2004 में नई दुनिया इंदौर, 1966 से 1980 में नवभारत टाइम्स दिल्ली, बुम्बई दिनमान, टाइम्स प्रकाशन समूह, 1974 से 1980 में ब्यूरो चीफ यू एन. आई., 1987 से 1998 में कार्यकारी–सलाहकार संपादक, देशबन्धु सलाहकार सम्पादक, पूर्व से बारदाना–हितवाद, नागपुर, जागरण, झांसी में आपने कार्य किया । आप की प्रकाशित हुई पुस्तकों के नाम : 1972–1980 जनसभा साप्ताहिक का प्रकाशन, 1971–मध्य प्रदेश की राजनीति बदलते चेहरे, 1998–मध्य प्रदेश की राजनीति कुछ कहीं कुछ अनकही, 1998–99 मुखौटों का बाजार, रोशनी का तलाश (ललित निबंध), 2006 समय के शब्द चित्र, मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़, हम कितने शकुनि (ललित निबंध), 2008–बस्तरः आधी सदी का सफर । 2004 में आपके द्वारा पत्रकारिता पर रायपुर, भिलाई, भोपाल, इंदौर, में स्कूल प्रदर्शनी आयोजित की गई। प्रकाशनार्थ–छत्तीसगढ़ आदि से वर्तमान।

बसंत तिवारी को वसुंधरा सम्मान, दुर्ग–भिलाई, सृजन सम्मान–रायपुर, माधव राव सप्रे संग्रहालय भोपाल में सम्मान से सम्मानित किया गया है ।

अशोक सिंघई

छत्तीसगढ़ ही नहीं संपूर्ण भारतवर्ष में अपने इस्पात की चमक बिखेरने वाले लघु भारत भिलाई को, अपनी कर्मभुमि बनाने वाले अशोक सिंघई का जन्म 25 अगस्त 1951, नवापारा राजिम,जिला–रायपुर में हुआ। रसायन शास्त्र में स्नातकोत्तर करने के साथ ही हिंदी साहित्य में एम.ए. की डिग्री प्राप्त अशोक सिंघई जी ने भिलाई इस्पात संयंत्र के राजभाषा विभाग के विभागाध्यक्ष के रुप में अपनी सेवाएँ देते हुए, साहित्यिक पत्रिका पांडुलिपि के प्रधान संपादक एवं स्वतंत्र लेखन का कार्य भी बखुबी अंजाम दिया।

अपनी साहित्यिक यात्रा के दौरान दो दशक तक लिट्ररी क्लब भिलाई के अध्यक्ष रहे अशोक सिंघई की मूल विद्या काव्य लेखन रही। महाविद्यालयीन जीवन से अनवरत लेखन करते हुए वर्ष 1969 में पहली कविता प्रकाशित की। प्रकाशित कृतियाँ– अलविदा बींसवी सदी (120 पेज की प्रदीर्घ कविता) संभालकर रखना अपनी आकाशगंगा, धीरे–धीरे बहती है नदी, सुन रही हो ना (सभी काव्यसंग्रह) के साथ आपकी कई कहानियां और लेख देश की कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई। कवि के हाथ और संसार,, समुद्र, चाँद और मैं (दोनों काव्य संग्रह)।

अशोक सिंघई को महाप्राण निराला शिरोमणि सम्मान भुवनेश्वर उड़ीसा, काव्यकला सम्मान कोडंगल्लूर केरल, साहित्य विभूति सम्मान जलपाई गुड़ी, पश्चिम बंगाल, सृजन गाथा सममान रायपुर, भारतेन्दु हरिश्चंद्र साहित्य शिरोमणि सम्मान जोधपुर राजस्थान आदि अनेक सम्मान प्राप्त हुए।

दादूलाल जोशी 'फरहद'

दादूलाल जोशी 'फरहद' का जन्म 01 जनवरी 1951 को ग्राम–फरहद, पो–सोमनी, जिला–राजनांदगांव में हुआ था। आपने एम.ए.हिंदी, बी.एड, पी.एच.डी., डी.पी.एड. (शोधरत) में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप भिलाई विद्यालय, सेक्टर–2, भिलाई में हिंदी के सेवानिवृत्त व्याख्याता रहे।

दादूलाल जोशी 'फरहद' ने विद्यार्थी जीवन से लेखन प्रारम्भ किया। आपने अब न चुभन देते हैं, कांटे बबूल के काव्य संग्रह एवं आनी बानी चौदह भारतीय भाषाओं की कविताओं का छत्तीसगढ़ी में अनुवाद कर प्रकाशित किया। आपने आरंभ/अपने चिन्हारी/गुरू घासीदास पत्रिका/सत्यध्वज का संपादन किया। आपने प्रकाशन साहित्य की सभी विधाओं में सतत् लेखन हेतु उपलब्धि प्राप्त की है। आपने हिंदी व छत्तीसगढ़ी नाटकों में अभिनय भी किया है।

दादूलाल जोशी 'फरहद' को म.प्र. दलित साहित्य अकादमी (1996), छत्तीसगढ़ कलाकार कल्याण महासंघ दुर्ग (1999) द्वारा छत्तीसगढ़ कलम केशरी, म.प्र. लेखक संघ ग्वालियर इकाई उत्कृष्ट साहित्यिक/सामाजिक लेखन सम्मान (1999), सामाजिक समरसता सम्मान (2001), संयंत्र कर्मी लोक कलाकार सम्मान (2006), देवदास बंजारे स्मृति पंथी महोत्सव में प्रेम साईमन स्मृति सम्मान (2009) से सम्मानित किया गया है।

परितोष चक्रवर्ती

परितोष चक्रवर्ती का जन्म 07 अप्रेल 1951 को शक्ति में हुआ था। परितोष चक्रवर्ती ने एम.ए. (समाज शास्त्र), बी.जे. में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप एस.ई.सी.एल. में जनसंपर्क प्रमुख के पद से सेवानिवृत्त हुए व अपने स्वतंत्र लेखन के लिए प्रसिद्ध रहे।

परितोष चक्रवर्ती ने 19 वर्ष की उम्र से लेखन की शुरूआत की। म.प्र. के 5 दैनिकों, 2 साप्ताहिकों और राष्ट्रीय स्तर के 2 साप्ताहिकों में लगभग 11 वर्ष तक सेवारत रहे। फिर भिलाई इस्पात संयंत्र में जनसंपर्क विभाग में आए, क्रमशः 3 सार्वजनिक उपक्रमों के जनसंपर्क विभाग में काम करने के बाद एस.ई.सी.एल. बिलासपुर में जनसंपर्क प्रमुख से सेवानिवृत्त हुए। रायपुर में स्वतंत्र लेखन का कार्य किया। आपकी प्रकाशित कृतियों में सड़क नंबर तीस, घर बुनते हुए, काई नाम न दो, अंधेरा समुद्र (कहानी संग्रह), अक्षरों की नाव, ऊँचाइयों वाला बौनापन (कविता संग्रह), मुखौटे (नाटक), अभिशाप्त दोपत्य (लघु उपन्यास), आ जा मेरी गाड़ी में बैठ जा, फक्कड़नामा (व्यंग्य संग्रह), आदि उल्लेखनीय है। छत्तीसगढ़ में नक्सलवाद पर एक पस्तिका भी है। कुछ रचनाओं का आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारण हुआ। मति नंदी के उपन्यास स्ट्राइकर तथा स्टॉपर, गौतम कुमार झा के कविता संग्रह हरी घास पर नंगे पांव के अलावा ए.के.गुप्ता की किताब मदर टेरेसा का बंगला से हिंदी में अनुवाद प्रकाशित हुए।

परितोष चक्रवर्ती का वागेश्वरी पुरस्कार, प्रमोद वर्मा स्मृति पुरस्कार, राजभाषा सरस्वती शील पुरस्कार, हैदराबाद, छत्तीसगढ़ राष्ट्रभाषा सम्मान, एम.जी.एम.आई. पुरस्कार, पी. आर.एस.आई. गृह पुस्तक पुरस्कार व अन्य पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

शकुन्तला शर्मा

शकुन्ला शर्मा का जन्म 26 अगस्त 1951 को कोसला जांजगिर–चांपा में हुआ था । शकुन्ला शर्मा ने एम. ए.(संस्कृत, हिंदी), बी.एड. में अपनी शिक्षा प्राप्त की । आप सरयूद्विज (छ.ग.) की सम्पादक रही व अपने स्वतंत्र लेखन के लिए भी प्रसिद्ध रही।

शकुन्ला शर्मा की पारिवारिक पृष्ठभूमि साहित्यिक होने के कारण बचपन से लेखन के प्रति रूझान रहा ।आपकी मूलतः हिंदी व छत्तीसगढ़ी में कविता व गीत रही। प्रकाशित कृतियों में चंदा के छाँव म (छत्तीसगढ़ी कविता संग्रह), ढाई आखर (कविता संग्रह), लय (गीत संग्रह), शकुन्तला (खण्ड काव्य), कठोपनिषद् (गीतिमय व्याख्या), संप्रेषण (गीत संग्रह), इदं न मम (निबंध संग्रह), रघुवंश (महाकाव्य), कोसला (चम्पू), कुमार सम्भव (छत्तीसगढ़ी महाकाव्य) उल्लेखनीय है।

शकुन्ला शर्मा को साहित्य सृजन के लिए कुंवर वीरेन्द्र सिंह सम्मान, ताज मुगलिनी अलंकरण, भारती रत्न अलंकरण, पं. माधव राव सप्रे साहित्य सम्मान, दीपाक्षर सम्मान, द्विज कुल गौरव अलंकरण, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित किया गया है ।

डॉ. सुरेन्द्र दुबे

डॉ. सुरेन्द्र दुबे का जन्म 08 अगस्त 1953 को बेमेतरा, जिला–दुर्ग में हुआ था। डॉ. सुरेन्द्र दुबे ने बी.ए., एम.एस., एम.ए. में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी, छ.ग. शासन (रायपुर) के रूप में कार्यरत रहे।

डॉ. सुरेन्द्र दुबे की साहित्यिक यात्रा : मिथक मंचन (काव्य संग्रह), किस पर कविता लिखूं (काव्य संग्रह), नवा सुरूज (छ.ग.नाटिका संग्रह), मोर पंड़वा गंवागे (छ.ग. हास्य कविता), कविता माला नवभारत धारावाहिक प्रकाशन, झूठ का परिणाम नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, दो पांव का आदमी (नुक्कड़ नाटक संग्रह), पीरा (छ.ग.नाटक), आगरा वि.नि. द्वारा डॉ. सुरेन्द्र दुबे के रचना संसार में मिथकों का प्रयोग विषय पर पी.एच.डी., डायमंड पॉकेट बुक्स द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित हास्य व्यंग्य कविताएं संकलित वर्ष 1997–98 एवं 1999 हास्य व्यंग्य रचनाओं की कई सीडी, विभिन्न चैनलों से प्रसारण, राष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशन।

डॉ. सुरेन्द्र दुबे द्वारा गणतंत्र दिवस के अवसर पर लाल किले पर चार बार काव्य पाठ, अमेरिका के बारह शहरों में काव्य पाठ, अरब देशों दुबई, शारजहां, अजमान, मस्कट, ओमान के अलावा जकार्ता (इंडोनेशिया) में काव्य पाठ किया गया है। डॉ. सुरेन्द्र दुबे को अमेरिका में लीडिंग इंडियन पोएट सम्मान, मस्कट में अंतर्राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान, अट्टहास सम्मान (लखनऊ), वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा काव्य पुरस्कार, कहानी के लिए साक्षरता का राष्ट्रीय पुरस्कार, व्यंग्य श्री सम्मान, रोटरी, लायन्स जेसिज, जेसीआर्ट द्वारा महुमुखी प्रतिभा सम्मान, शासकीय आयुर्वेद, महाविद्यालय की स्वर्ण जयंती पर सम्मान (2006) पद्मश्री सम्मान (2009) से सम्मानित किया गया है।

डॉ. मृणालिका ओझा

पिछले तीन दशक से भी ज्यादा समय से लोक साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय छत्तीसगढ़ की साहित्यकार डॉ. मृणालिका ओझा का जन्म 13 फरवरी 1954 को रायपुर में हुआ था। डॉ. मृणालिका ओझा ने एम.ए., पी.एच.डी. (हिंदी), बी.एड. में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शासकीय विद्यालय में प्रधान पाठिका रही।

डॉ. मृणालिका ओझा की साहित्यिक यात्रा : अग्निपथ (काव्य संग्रह), सरबरस (सचित्र कथा), मानवाधिकार पर केंद्रित लेखन, लोक कथाओं में लोक और लालित्य (संदर्भ–छत्तीसगढ़), पर पी.एच.डी. शोधग्रंथ, हिंदी–छत्तीसगढ़ी फिल्मों के लिए पटकथा लेखन, रेडियो डाइट्शेवेल (पश्चिम जर्मनी) से कविता पुरस्कृत, रेडियो ताशकंद से विचार प्रसारण, आकाशवाणी रायपुर, भोपाल से एससीईआरटी के शैक्षणिक कार्यक्रम अनुगूंज, आकाशवाणी रायपुर के लगभग सभी कार्यक्रमों में कहानी, वार्ता, परिचर्चा, कविताएं एवं नाटक (हिंदी छत्तीसगढ़ी) प्रसारित, दूरदर्शन रायपुर से कुछ टेलीफिल्मों एवं अनेक कविताओं का प्रसारण, आकाशवाणी दूरदर्शन की (हिंदी–छत्तीसगढ़ी) एप्रूव्ड आर्टिस्ट, कई नाटकों (हिंदी–छत्तीसगढ़ी), टेलीफिल्मों में अभिनय, साक्षरता–मानवाधिकार शिक्षा आदि गतिविधियों में सक्रिय, तीन बड़ी फिल्मों का पटकथा लेखन, छत्तीसगढ़ दर्शन (पर्यटन विभाग), नैना (छत्तीसगढ़ी नशा विरोधी फिल्म), लइका (छत्तीसगढ़ी), फिल्म का पटकथा लेखन।

डॉ. मृणालिका ओझा को भारत एक्सीलेंस, रेडियो डाइट्शेवेल (पश्चिमी जर्मनी), साहित्य क्लब ऋचा, सांस्कृतिक क्लब जतन, इंटरहील क्लब, रोटरी क्लब, गुजराती ब्रह्म समाज, शिक्षक संघ, महाकवि कपिलनाथ कश्यप सममान, लोकमंच कारी सममान, लोककला महोत्सव भिलाई, लोककला मंच पंडवानी अटारी, ताजमुगलनी अखिल भारतीय कवियित्री सम्मान, सृजन श्री सम्मान से सम्मानित किया गया है।

कुबेर सिंह साहू

कुबेर सिंह साहू का जन्म 16 जून 1956 को भोढ़िया, राजनांदगांव में हुआ था। कुबेर सिंह साहू ने एम.ए.(हिंदी) में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शास.उ.मा. वि. कन्हारपुरी, जिला–राजनांदगांव में व्याख्याता रहे।

कुबेर सिंह साहू ने महाविद्यालय जीवन से लेखन की शुरूआत की। प्रकृति की सुंदरता का अवलोकन कर पहली रचना कविता के रूप में रच गई। पहली कविता 1992 में 'सड़कें और मुसाफिर' स्थानीय दैनिक अखबार में प्रकाशित हुई। इसके आलावा साहित्य अमृत दिल्ली एवं स्थानीय पत्र–पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित हुई। आकाशवाणी रायपुर से कहानियों का प्रसारण हुआ। अन्य प्रकाशित कृतियों में भूख माफी यंत्र (काव्य संग्रह) प्रकाशनाधीन–माइक्रो कविता और दसवां रस (व्यंग्य संग्रह) और कितना सबूत चाहिये (काव्य संग्रह) एवं कहा नहीं (छत्तीसगढ़ी कहानी संग्रह) है।

कुबेर सिंह साहू को साकेत साहित्य परिषद, सुरगी द्वारा साकेत सम्मान–2003, छत्तीसगढ़ी राजभाषा आयोग द्वारा सम्मान (2011) से सम्मानित किया गया है।

जगदीश देशमुख

जगदीश देशमुख का जन्म 30 दिसम्बर 1957 को दरबारी नवागांव, तह–बालोद, पो–कोबा, जिला–दुर्ग में हुआ था। जगदीश देशमुख ने एम.ए. बी.एड. अंग्रेजी साहित्य में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शा.कन्या शिक्षा परिसर, अम्बागढ़ चौकी, जिला–राजनांदगांव में अंग्रेजी के व्याख्याता रहे।

जगदीश देशमुख का प्रकाशन सम सामाजिक आलेख, कविताएँ, पुस्तकें–निरंजन चरित एवं प्रेरक अनुभूति आध्यात्मिक/धरती के भगवान (छत्तीसगढ काव्य संग्रह)/ अरण्य संस्कृति के संवाहक श्रीराम, पर्यावरण संरक्षण को समर्पित कृति समाचार पत्रों नई दुनिया, नवभारत, हरिभूमि, सबेरा संकेत, दैनिक भास्कर में प्रकाशित हुआ।

जगदीश देशमुख को कलेक्टर द्वारा साक्षरता सम्मान (1994–95), साक्षरता मिशन द्वारा लेखन पर सम्मान (1997), कलेक्टर द्वारा शिक्षक सम्मान (1999), प्रखर प्रतिभा सम्मान (2005), वागर्थ भूषण अलंकरण (2002), मुख्यमंत्री द्वारा शाकाहार शिक्षक सम्मान (2009), छ.ग. शासन द्वारा आदर्श शिक्षक सम्मान (2008), छत्तीसगढ़ अस्मिता सम्मान (2009), राज्यपाल पुरस्कार से सम्मानित (5सितम्बर) से सम्मानित किया गया है।

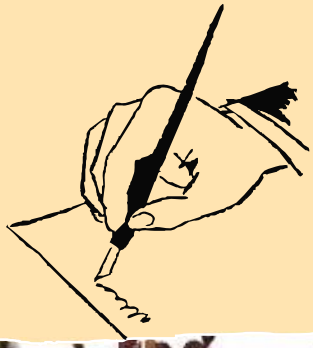

मंगत रविन्द्र

मंगत रविन्द्र का जन्म 04 अप्रेल 1959 को गिधौरी, पो–दादरकला, व्हाया–भैंसमा, जिला–कोरबा में हुआ था । जगदीश देशमुख ने एम.ए. (हिंदी), आयुर्वेद रत्न में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप स्वतंत्र लेखन के लिए प्रसिद्ध रहे।

मंगत रविन्द्र की प्रकाशित कृतियाँ–छत्तीसगढी भाषा व्याकरण, माता सेवा, गीत गंगा, मयारू बर मया, चमेलीडारा, आधुनिक विचार रजनजोत, सुगंध धारा, सतगुरू चालीसा, श्री परदेशी बाबा: एक दर्शन, श्री सतनाम पूजा एवं विवाह पद्धति गुलाब लच्छी, प्रेस में–कंचन पान, काव्य उर्मिल, सतनाम सुधा, लीमऊ रस, श्री प्रभातसागर (महाकाव्य) पृष्ठ 953। मंगत रविन्द्र को संगीत और चित्रकारी में भी रूचि रही।

मंगत रविन्द्र को साहित्य अकादमी नई दिल्ली से भाषा सम्मान (छत्तीसगढ़ के लिए प्रथम) के साथ अन्य 55 सम्मान प्राप्त है ।

धाम–दिन गइस, अइस बरखा के दिन
सनन–सनन चलो पवन लहरिया।
छाये रहा अकास मां, चारों खूंट धुंवा साही
बरखा के बादर निच्चट भिम्म करिया।।

चमकय बिजली, गरजे घन घेरी बेरी
बरसे मूसस्धार पानी छर छरिया।
भर गे खाई–खोघरा, कुंआ डोली डांगर लें।
टिप–टिप ले भरगे नदी, नरवा तरिया।।

कोदूराम दलित

डॉ. पी.सी. लाल यादव

डॉ. पी.सी.लाल यादव का जन्म 09 जून 1955 को ग्राम–टिकरी, गंडई, जिला–राजनांदगांव में हुआ था। डॉ. पी. सी.लाल यादव को एम.ए. (हिंदी लोकसंगीत), पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त है। आपने छत्तीसगढ़ी पंडवानी कथा गायन एक अध्ययन विषय पर इंदिरा कला संगीत वि.वि.खैरागढ़ से अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शा.पूर्व मा.शाला गोकना में उच्च वर्ग शिक्षक के रूप में पदस्थ रहे।

डॉ. पी.सी.लाल यादव ने छत्तीसगढ़ी व हिंदी में समान रूप से लेखन किया। आकाशवाणी व दूरदर्शन से आपके प्रसारण हुए। आपकी साहित्यिक यात्रा : प्रेमगीत (संकलन) म.प्र. आदिवासी लोककला परिषद भोपाल, गांधी गीत (संकलन) म.प्र. आदिवासी लोककला परिषद, भोपाल, मोरगांव के कोरा (छत्तीसगढ़ी गीत संग्रह), आंखें खुल गई (नव साक्षर साहित्य) राज्य शिक्षा संस्थान इंदौर, जहां पाषाण बोलते हैं, छत्तीसगढ़ का डंडा नृत्य गीत–दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र नागपुर, सरग निसैनी (छत्तीसगढ़ी शिशु गीत), छत्तीसगढ़ी संस्कार गीत, सुरता के सुतरी (छत्तीसगढ़ी गीत संग्रह)। आपके कला मंचीय अनुभव : छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य, लोक संस्कृति एवं लोककला के संरक्षण व संवर्धन के लिए दूध मोंगरा के माध्यम से छत्तीसगढ़ी लोक गीत, लोकनृत्य व लोक नाट्य (नाचा) का अनवरत प्रदर्शन आज भी जारी।

डॉ. पी.सी.लाल यादव विभिन्न संस्थाओं द्वारा शिक्षक सम्मान, साहित्य सम्मान, कवि रत्न एवं सारस्वत सम्मान, लोककला सम्मान, अक्षर सम्मान, राष्ट्रपति की ओर से जनगणना 2001 में विशिष्ट कार्य के लिए रजत पदक प्राप्त, चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा बाल कहानी लेखन के लिए पुरस्कृत हुए है।

विनोद साव

विनोद साव का जन्म 20 सितंबर 1955 को दुर्ग में हुआ था । विनोद साव ने एम.ए.(समाजशास्त्र) में अपनी शिक्षा प्राप्त की । आप भिलाई इस्पात संयंत्र में सहायक प्रबंधक के पद पर पदस्थ रहे।

विनोद साव की दो उपन्यास, तीन व्यंग्य संग्रह, संस्मरणों का एक संग्रह प्रकाशित हुई। हंस, पहल, नया ज्ञानोदय, वागार्थ, समकालीन भारतीय साहित्य, अक्षरपूर्व और साक्षात्कार में कहानियों तथा अन्य रचनाओं का भी प्रकाशन हुआ ।

विनोद साव के सम्मान : अट्टहास सम्मान–व्यंग्य लेखन के लिए वर्ष 1998 में रवीन्द्रालय, लखनऊ में प्रसिद्ध लेखक श्रीलाल शुक्ल द्वारा सम्मानित, वागीश्वरी सम्मानः उपन्यास के लिए वर्ष 1999 में मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन, भोपाल में डॉ. नामवर सिंह द्वारा पुरस्कृत, जगन्नाथराय शर्मा स्मृति सम्मान वर्ष 2003 को जमशेदपुर में वरिष्ठ समालोचक डॉ. शिवकुमार मिश्र एवं खगेन्द्र ठाकुर द्वारा दिया गया, स्पेनिन हेंसल एवार्ड वर्ष 2007 की श्रेष्ठ कृति के रूप में उपन्यास भोंगपुर–30 कि.मी. को 6 सितम्बर 2008 को रांची के प्रसिद्ध शैक्षणिक संस्थान द्वारा ग्यारह हजार रूपयों का पुरस्कार दिया गया, दूरदर्शनः दूरदर्शन के लिए लिखे गए हास्य धारावाहिक 'जरा बच के' का प्रसारण।

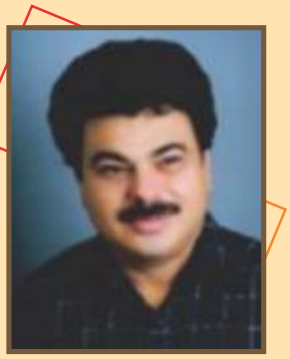

डॉ. अजय पाठक

डॉ. अजय पाठक का जन्म 14 जनवरी 1960 को कसडोल में हुआ था। आपकी शिक्षा विज्ञान पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातक, प्राणी शास्त्र हिंदी साहित्य, समाज शास्त्र, भारतीय इतिहास में स्नातकोत्तर, इतिहास विषय में पी. एच.डी. थी। आपने संयुक्त नियंत्रक, नापतौल विभाग, छत्तीसगढ़ शासन रायपुर एवं छ.ग. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। आपकी अनेक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं में भी सकिय भागीदारी रही।

डॉ. अजय पाठक के गीतसंग्रह : यादों के साथ, महुए की डाली पर उतरा बसंत, जीवन एक धुंए का बादल, गीत गाना चाहता हूं, आँख का तारा नहीं हूं, सुधियों के आरपार, जंगल एक गीत है, (भारत सरकार द्वारा मेदिनी पुरस्कार से सम्मानित), देहरी पर दीप रख दो, यक्ष प्रश्न, बूढ़ें हुए कबीर, उड़ चल मानसरोवर, मुगल कालीन शिक्षा, साहित्य और ललितकला (शोधग्रंथ)।

डॉ. अजय पाठक काव्य संग्रह मंजरी, छत्तीसगढ़ के सरस स्वर, (छत्तीसगढ के प्रतिनिधि गीतकारों की रचनाओं का संग्रह), अनियतकालिक पत्रिका छत्तीसगढ़ की माटी से, साहित्य पत्रिका नये पाठक (त्रैमासिक) के संपादक रहे।

डॉ. अजय पाठक के प्रकाशाधीन कथा पचीसी (कहानी संग्रह), दशमत (उपन्यास), साथ ही एक व्यंग संग्रह, विडियो एलबम्स–भक्तिपरक गीतों का आडियो एलबम (अब के अरज हमारा) एवं (तोर जोत जुले), गीत एवं गजलों का विडियो एलबम (एहसास), शीर्षक से जारी थे।

डॉ. अजय पाठक भारत सरकार द्वारा मेदिनी पुरस्कार 2009एवं अनेक संस्थाओं द्वारा साहित्यिक उपलब्धियों के लिये सम्मानित हुए।

डॉ. सविता मिश्रा

डॉ. सविता मिश्रा का जन्म 08 अप्रेल 1961 को भनपुरी, रायपुर में हुआ था । आपने एम.ए. (हिंदी), पी.एच.डी. में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शा.दू.ब. स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, रायपुर में प्राध्यापक रही।

डॉ. सविता मिश्रा की साहित्यिक यात्रा : राष्ट्रीय शोध पत्रिका, शासकीय, अशासकीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक पत्रिका, स्मारिका, दैनिक अखबारों में 100 से अधिक आलेख प्रकाशित, प्रकाशित काव्य संग्रह–यही है दुनिय वर्ष 2006, फुटकर कविताएँ (अप्रकाशित 100 से अधिक), छत्तीसगढ़ी काव्य 25 से अधिक, सम्पादन–जनपदीय भाषा साहित्य (छत्तीसगढ़ी), बी.ए.तृतीय हिंदी साहित्य (प्रथम प्रश्नपत्र), छत्तीसगढ़ दर्शन श्री ललित मिश्र द्वारा रचित छत्तीसगढ़ी काव्य संग्रह 'मनखे बठवा हो गे हे', पं. सुंदरलाल शर्मा कृत छत्तीसगढ़ी दानलीला वर्ष 2009, ब्रह्मास्त्र वर्ष 2010।

डॉ. सविता मिश्रा को 2009 महाकवि अमृतलाल दुबे सम्मान बिलासपुर, महाकवि कपिलनाथ सम्मान बिलासपुर, 2008 में ब्रह्म सम्मान, सृजन यात्री सम्मान, शिक्षा प्रतिभ सम्मान (प्रांतीय ब्रह्मामण सम्मेलन, महासमुन्द), 2007 कविश्री सम्मान (राष्ट्रीय कवि सम्मेलन सत्संग भवन, दूधाधारी मठ, रायपुर), साहित्य सम्मान (पं. सुन्दरलाल शर्मा वि.वि. बिलासपुर स्थापना दिवस), छत्तीसगढ़ी साहित्य परिषद द्वारा सम्मानित, छत्तीसगढ़ी साहित्य सम्मान, 2004 अस्मिता शंखनाद सम्मान 2003 अलंकरण सम्मान (विधानसभा अध्यक्ष स्व. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शुक्ल द्वारा), 2000 पं. सुंदरलाल शर्मा पर हिंदी में प्रथम पी.एच.डी. तथा उनके व्यक्तित्व एवं कृतिव पर उल्लेखनीय कार्य के लिए छ.ग. शासन की ओर से मुख्यमंत्री द्वारा सम्मानित, शिक्षा के क्षेत्र में अ.भा. नई दुनिया नायिका एवार्ड 2011 से सम्मानित किया गया है।

डॉ. उर्मिला शुक्ला

डॉ. उर्मिला शुक्ला का जन्म 20 सितम्बर 1964 को रायपुर में हुआ था। डॉ. उर्मिला शुक्ला ने एम.ए.(हिंदी साहित्य), पी.एच.डी., डी.लिट् में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शासकीय छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर में हिंदी की प्राध्यापक रही।

डॉ. उर्मिला शुक्ला की रचनाएँ अपने–अपने मोर्चे पर (कहानी संग्रह), प्रकाशनाधीन–आओ मंटोरा घर चलें, (कहानी संग्रह), गोदना के फूल (छत्तीसगढ़ी कहानी संग्रह), महाभारत म दुरपती (छत्तीसगढ़ी खंड काव्य), गुलमोहर (संयुक्त गजल संग्रह) है। इसके अलावा डॉ. उर्मिला शुक्ला की देश–विदेश में साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अनेक शोधपत्र एवं भागीदारी रही।

डॉ. उर्मिला शुक्ला को छ.ग. राजभाषा पुरस्कार–2010, सर्वश्रेष्ट कविता पुरस्कार–2010, पुमन भास्कर राज्यस्तरीय विजेता–2010, म.प्र. साहित्य परिषद्, भापाल–1995, म.प्र. राष्ट्रभाषा पुरस्कार–2006 से सम्मानित किया गया है।

डॉ. सुभद्रा राठौर

डॉ. सुभद्रा राठौर का जन्म 12 अप्रेल 1966 को बैकुण्ठपुर, कोरिया में हुआ था। डॉ. सुभद्रा राठौर ने एम.ए. (हिंदी), पी.एच.डी. में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप शासकीय छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर में हिंदी की सहायक प्राध्यापक रही।

डॉ. सुभद्रा राठौर की साहित्यिक यात्रा : राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक पत्र–पत्रिकाओं में आलेख, कविता, समीक्षा (उपन्यास, कहानी, कविता आदि) का सतत् प्रकाशन समसामयिक मुद्दों पर समाचार पत्र में लेखन, लगभग पंद्रह राष्ट्रीय व राज्य–स्तरीय शोध–संगोष्ठियों, कार्यशालाओं में भागीदारी व शोध–पत्र पुस्तुति, आकाशवाणी से वार्ता–प्रसारण, प्रकाशित कृति–काकेत का शैली वैज्ञानिक अध्ययन (संदर्भ ग्रंथ), समय का सत्य (संकलन), कैलाश मानसरोवर यात्रा ईह लोक से शिव लोक (यात्रा संस्मरण) प्रमुख है, सरोकर (संकलन) शीघ्र प्रकाशय।

डॉ. सुभद्रा राठौर को राष्टभाषा सेवा सम्मान, रायपुर महाकौशल एवं संस्कृति परिषद (म.प्र.) द्वारा भारत भारती सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त जयन्ती से श्री गगोई वैश्य समाज द्वारा सम्मानित, अंर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर हीरो होण्डा व जी 24 घंटे द्वारा हिंदी सेवी सम्मान से सम्मानित किया गया है।

"एक राष्ट्र की संस्कृति उसमें रहने वाले लोगो के दिलों में और आत्मा में रहती है।"

जय प्रकाश मानव

जय प्रकाश मानव का जन्म 02 अक्टूबर 1965 को रायगढ़ में हुआ था। जय प्रकाश मानव ने एम.ए. (भाषा विज्ञान), एम.एस.सी.(आई.टी.) में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप छत्तीसगढ़ शासन में अधिकारी रहे।

राष्ट्रीय अंतार्राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं स्थानीय पत्र–पत्रिकाओं में जय प्रकाश मानव की रचनाएं प्रकाशित है। जय प्रकाश मानव का आकाशवाणी रायपुर से शैक्षिक कार्यक्रम का निरंतर दो वर्ष तक साप्ताहिक प्रसारण होता रहा। जय प्रकाश मानव की प्रकाशित कृतियां: कविता संग्रह–तभी होती है सुबह, होना ही चाहिए आंगन, अबोले के विरूद्ध, निबंध निबंध–दोपहर में गांव (पुरस्कृत), बाल गीत–चलो चलें अब झील पर, सब बोले दिन निकला, एक बनेगें नेक बनेगें, मिलकर दीप जलायें, नव साक्षरोपयोगी–यह बहुत पुरानी बात है, छत्तीसगढ के सखा, लोक साहित्य–लोक वीथी–छत्तीसगढ़ की लोक कथाएं(10 भाग), हमारे लोकगीत, छत्तीसगढ़ी–कलादास के कलाकारी (छत्तीसगढ़ी भाषा में प्रथम व्यंग्य संग्रह), प्रकाश्य–हिंदी ललित निबंध, हिंदी कविता में मां.संपादित कृतिविहंग (हिंदी कविता में पक्षी), महत्व: डॉ. बलदेव, महत्व: स्वाराज प्रसाद त्रिवेदी, छत्तीसगढ़ी: दो करोड़ लोगों की भाषा, बगर गया बसंत (बाल कवि श्री बसंत पर एकाग्र), एक नई पूरी सुबह कवि विश्वरंजन पर एकाग्र, प्रभाष स्मृति (प्रभाष जोशी पर केंद्रित), पत्रिका संपादन–बाल पत्रिका, बाल बोध (मासिक) के 12 अंकों का संपादन, लघुपत्रिका प्रथम पंक्ति (मासिक) के 2 अंकों का संपादन, कार्यकारी संपादक–पांडुलिपि (त्रेमासिक), अंतरजाल पत्रिका–वेब पोर्टल सृजनगाथा डॉट कॉम का पिछले पाँच वर्षों से प्रकाशन व सम्पादन, आडियो एलबम–तोला बंदी (छत्तीसगढ़ी), जय माँ चंद्रसैनी (उड़िया), वीडियो एलबम–घरःघर माँ हावय दुर्गा (छत्तीसगढ़ी), संस्थपना–राज्य की प्रमुख सांस्कृतिक संगठन, सृजन सम्मान का संस्थापक महासविच 1995 से।

जय प्रकाश मानव को कादम्बिनी पुरस्कार (टाईम्स ऑफ इंडिया), बिसाहू दास महंत छत्तीसगढ़ अस्मिता पुरस्कार, अंम्बेडर फैलोशिप (दिल्ली), अंबिका प्रसाद दिव्य रजत अलंकरण, विद्यावाचस्पति की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया है।

राजाराम रसिक

राजाराम रसिक का जन्म 11 अगस्त 1973 को भिलाई, जिला–दुर्ग में हुआ था। राजाराम रसिक ने बी.ए. (हिंदी) में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप छत्तीसगढ़ी साहित्य अकादमी, रिसाली, भिलाई के संस्थापक/सचिव रहे।

राजाराम रसिक की लेखन–बाल साहित्यकार (बाल कविता, बाल कहानियाँ, हंसौली आदि) नवभारत 1998–99 व 2000 में सैकड़ों कविता कहानियाँ निरन्तर प्रकाशित हुई।

आपकी हरिभूमि–चौपाल, देशबन्धु–मंडई, छत्तीसगढ़–इतवारी में भी छत्तीसगढ़ी व्यंग्य लेख, कहानी व कविताएँ प्रकाशित हुई।

राजाराम रसिक को दुलरवा सम्मान ग्राम खरा (पाटन), मयारू साहित्य सम्मान असोगा (रानीतराई), वक्ता मंच रायपुर–युवा रचनाकार प्रथम पुरस्कार, जयपुर बाल साहित्य मंच–राजस्थान (बाल कहानी–प्रथम), दूरदर्शन रायपुर 96, भूईयां के गोठ–कविता पाठ आकाशवाणी रायपुर 96, युववाणी–कविता, कहानियाँ, प्रेरक प्रसंग से सम्मानित किया गया है।

धन धन रे मोर किसान, धन धन रे मोर किसान
मैं तो तोला जांनेव तैंअस, भुइंया के भगवान।
तीन हाथ के पटकू पहिरे, मूड़ म बांधे फरिया
ठंडा गरम चउमास करिस तोर, काया परगे करिया
अन्न कमाये बर नई चीन्हस मंझन, सांझ, बिहान।।

द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र'

शैल चंद्रा

शैल चंद्रा का जन्म 09 अक्टूबर 1966 को रायपुर में हुआ था। शैल चंद्रा ने एम.ए. बी.एड., एम. फिल (हिंदी) में अपनी शिक्षा प्राप्त की। आप उ.मा. विद्यालय, बिरगुड़ी, तहसील–नगरी, जिला–धमतरी की प्राचार्य रही।

शैल चंद्रा का देश की प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ, लघुकथा का निरन्तर प्रकाशन होता रहा। प्रकाशित कृतियां– विडम्बना (लघुकथा संग्रह), इक्कीसवीं सदी में भी (काव्य संग्रह), साप्तक–3 (काव्य संग्रह)।

शैल चंद्रा को आदिम जाति कल्याण विभाग, सहा. आयुक्त कार्यालय छ.ग. शासन द्वारा सर्वश्रेष्ठ शिक्षक अवार्ड, रचना साहित्य समिति एवं पाठक मंच गुरूर द्वारा आदर्श शिक्षिका अवार्ड, डॉ. अम्बेडकर विशिष्ट साहित्य सम्मान धमतरी द्वारा से सम्मानित किया गया है।

जउन भुईयाँ खेले, जउन भुइयाँ बाढ़े
तउन भुइयाँ के अब घुटत
आज छुटत अंगना, छुटत अंगना ।।
पुलपत जियरा, तलपत छिमरा
नैना नीर बहाय
छूटे घर गाड़ी, गाँव खेत बारी
परे पिंजरा म बनके सुआ ना,
आज छुटत अँगना, छूटत अँगना ।।

हरि ठाकुर

डॉ. एकांत श्रीवास्तव

छत्तीसगढ़ अंचल के अत्यंत समर्थ कवि श्री एकांत श्रीवास्तव का जन्म 08 फरवरी 1964 को रायपुर जिले के छुरा विकासखण्ड में हुआ। रसायन शास्त्र में स्नातकोत्तर करने के पश्चात साहित्य के प्रति अपने अनुराग के कारण एकांत श्रीवास्तव ने हिंदी साहित्य में एम.ए. कर पी.एच.डी. की डिग्री भी हासिल की एवं राजभाषा विभाग गृहमंत्रालय के अंतर्गत हिंदी शिक्षण योजना, कोलकाता(प.बं.) में प्राध्यापक के रुप में अपनी सेवाएँ देने लगे साथ ही साहित्य साधना में अपने को समर्पित कर दिया।

देश में विशिष्ट पहचान की सभी प्रमुख पत्रिकाओं में आपकी कविताएं प्रकाशित हो चुकी हैं। अन्न है मेरे शब्द, मिट्टी से कहूंगा धन्यवाद, बीज से फूल तक, शेल्टर फ्राम दिरेन (अंग्रजी में अनुदित प्रतिनिधि कविताओं का संचयन), आपके प्रमुख कविता संग्रह हैं। आपकी कविताएं अग्रेजी व कुछ भारतीय भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं, लोर्का, नाजिम हिकमत और कुछ दक्षिण अफ्रीकी कवियों की कविताओं का अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद भी आपने अपनी लेखनी से संपन्न किया है।

साहित्य के क्षेत्र में आपके उल्लेखनीय कार्यों के लिए डॉ. एकांत श्रीवास्तव को –शरद बिल्लौरे स्मृति कविता पुरस्कार, रामविलास शर्मा ऋतुगंध सम्मान, ठाकुर प्रसाद स्मृति पुरस्कार, दुष्यंत कुमार सम्मान, केदार सम्मान, डॉ. नगेन्द्र वर्मा सम्मान आदि विभिन्न अलंकरणों से नवाज़ा गया है।

अविश्वसनीय दरों पर लैंडलाईन ब्रॉडबैंड के साथ

BSNL

Upto 20 Mbps Speed

BSNL के किफायती लैंडलाइन - ब्रॉडबैंड प्लान

	BBG Combo ULD 45 GB Plan	BBG Combo ULD 150GB Plan	BBG Combo ULD 300 GB Plan	BBG Combo ULD 600 GB Plan
अनलिमिटेड डाटा	1.5 GB प्रतिदिन 20 Mbps तक स्पीड, पश्चात 1 Mbps तक की स्पीड उपलब्ध	5 GB प्रतिदिन 20 Mbps तक स्पीड, पश्चात 1 Mbps तक की स्पीड उपलब्ध	10 GB प्रतिदिन 20 Mbps तक स्पीड, पश्चात 1 Mbps तक की स्पीड उपलब्ध	20 GB प्रतिदिन 20 Mbps तक स्पीड, पश्चात 1 Mbps तक की स्पीड उपलब्ध
फिक्स्ड मासिक चार्ज	99	199	299	491
डाउन लोड / अपलोड	अनलिमिटेड	अनलिमिटेड	अनलिमिटेड	अनलिमिटेड
अनलिमिटेड कॉल्स (लोकल / एस.टी.डी.)	24 घंटे सभी नेटवर्क पर फ्री, पूरे भारत वर्ष में	24 घंटे सभी नेटवर्क पर फ्री, पूरे भारत वर्ष में	24 घंटे सभी नेटवर्क पर फ्री, पूरे भारत वर्ष में	24 घंटे सभी नेटवर्क पर फ्री, पूरे भारत वर्ष में

नोट :-
1. सभी प्लान के लिए सिर्फ 500 / -सिक्युरिटी डिपाजिट जमा करना होगा।
2. कम से कम एक माह तक कनेक्शन रखना होगा।
3. यह प्लान सिर्फ नये ब्रॉडबैंड उपभोक्ताओं के लिए उपलब्ध है।
4. यह प्लान 6 माह पश्चात् रेगुलर ब्रॉडबैण्ड प्लान में परिवर्तित हो जायेगा।
5. उपरोक्त सभी प्लान 4 जून से प्रभावी हैं, जो 90 दिनों के लिए ही उपलब्ध रहेंगे।
6. कनेक्शन बुकिंग के लिए 9400054141 पर कॉल करें या LL+BB टाइप कर 54141 पर SMS करें या निकटतम् बी.एस.एन.एल कार्यालय में संपर्क करें।

अनलिमिटेड कॉल्स & अनलिमिटेड डाटा

सेल रिफ्रेक्ट्री यूनिट, भिलाई

सेल SAIL

इस्पात हेतु रिफ्रेक्ट्री....

सिलिका उत्पाद

हमारी विशेषज्ञता

इस्पात सयंत्रो का निर्माण एवं रखरखाव, भव्य इमारतों, अस्पतालों एवं विश्वविद्यालयो का निर्माण, पूर्वोत्तर इलाकों का निर्माण, राजमार्गो एवं पुलों का निर्माण, देश की हर तरह की अधोसंरचनाओं का निर्माण,प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजनान्तर्गत सडकों का निर्माण इत्यादि.

एच.एस.सी.एल.भिलाई द्वारा भिलाई इस्पात सयंत्र की पी.सी.बी.भवन निर्माण का दृश्य

समझते जाओ,समझाते जाओ,हिंदी को आगे बढ़ाते जाओ.

We are everywhere, say, SAIL-Rourkela, Bhilai, Bokaro, Durgapur, Burnpur, Bhadravati, Salem, RINL-Vizag, NINL-Duburi, BHEL-Haridwar, RWF-Bengaluru & Air India - Mumbai

फेरो स्क्रैप निगम लिमिटेड

(भारत सरकार का एक उपक्रम), मिनी रत्न-II कंपनी

FERRO SCRAP NIGAM LIMITED

(A Govt. of India Undertaking), A Mini Ratna - II Company

ISO 9001:2008 14001:2004 & O.H.S.A.S. 18001:2007 प्रमाणित कंपनी

व्यर्थ का उपयोग - हमारा आदर्श

तकनीक - हमारा औजार

हम "व्यर्थ को अर्थ" में सम्परिवर्तित कर इस्पात संयंत्रों को विशिष्ट सेंवाएँ देने हेतु कृत संकल्पित है।

FSNL Bhawan,
Equipment Chowk,
Central Avenue,
Post Box No. - 37
BHILAI - 490 001
CHHATISGARH.

Tel. No. : 2222474/2222475 (P & T)
4036/4037 (BSP)
Fax No. : 0788 - 2220423
0788 - 2223884
E-mail : mds@fsnl.co.in
Website : www.fsnl.nic.in
CIN : U27102CT1989GOI005468

We are everywhere, say, SAIL-Rourkela, Bhilai, Bokaro, Durgapur, Burnpur, Bhadravati, Salem, RINL-Vizag, NINL-Duburi, BHEL-Haridwar, RWF-Bengaluru & Air India - Mumbai

हम सर्व-व्याप्त है : सेल-राउरकेला, भिलाई, बोकारो, दुर्गापुर, बर्नपुर, भद्रावती, सेलम, आर.आई.एन.एल. विभाग, एन.आई.एन.एल-डुबरी, बी.एच.आई.एल.-हरिद्वार, आर.डब्लू.एफ-बंगलुरू एवं एअर इंडिया-मुंबई

हस्तलिपि द्वारा राम राम से महाकाली देवी का चित्रण

सौजन्य : श्री गोविंद अग्रवाल, लेखापाल, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, भिलाई

भारतीय खाद्य निगम जिला कार्यालय दुर्ग द्वारा हिन्दी सप्ताह का आयोजन

निवासी लेखा परीक्षा कार्यालय, भिलाई द्वारा आयोजित नराकास स्तरीय कार्यक्रम में श्री अरुण कुमार रथ, अध्यक्ष नराकास भिलाई दुर्ग

माननीय श्री हरीश सिंह चौहान, सहा. निदेशक कार्यान्वयन एवं कार्यालयाध्यक्ष, राजभाषा क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, म.प्र. भोपाल के साथ नराकास मूल्यांकन उपसमिति के सदस्यगण

बैंक ऑफ़ बड़ौदा
Bank of Baroda
भारत का अंतर्राष्ट्रीय बैंक
एक ऐसा होम लोन,
जो खुशियाँ घर ले आए.
#AllInYourInterest बड़ौदा होम लोन
हमें 846 700 1111 पर मिस्ड कॉल दीजिए
आकर्षक ब्याज दर
360 माह तक की लम्बी चुकौती अवधि
मुफ़्त दुर्घटना बीमा सुविधा
टॉप अप ऋण सुविधा
शर्तें लागू.